www.thearyasamaj.org

ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

अगस्त २०१३

वर्ष ४२ : अङ्क १०
दयानन्दाब्द : १९०
विक्रम-संवत् : श्रावण-भाद्रपद २०७०
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,११४

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
सम्पादक (अवैतनिक) : राजवीर शास्त्री
प्रकाशक : धर्मपाल आर्य
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :

दयानन्दसन्देश (मासिक)

४२७, नया बांस, मन्दिर वाली गली,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९९५०६२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु०
वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस अंक के लेख

- स्वतन्त्रता दिवस की.... २
- वेदोपदेश ३
- गृहस्थ के कर्तव्य ५
- सुप्रीम कोर्ट का फैसला ७
- महर्षि दयानन्द जी के... ९
- हमने क्या खोजा.... १३
- हिन्दुओं की कमजोरियाँ १8
- हमारा सर्वस्व-ईश्वर, वेद.... २२
- गृहस्थ -आश्रम का आधार २६
- प्रसिद्ध शिक्षाविद्... २७

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण – ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) – ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

www.thearyasamaj.org

स्वतन्त्रता दिवस की ६६वीं वर्षगांठ (१५.०८.२०१३)

(इन्द्रदेव-सावरकरवाद प्रचार सभा, बुलन्दशहर)

देश में पुनः १९४७ वाली दशा दिखाई दे रही है। मजबूत नेता न होने से समस्याएँ बढ़ती ही जी रही हैं। भ्रष्टाचार-बलात्कार- गैंगरेप जैसी घटनाओं में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है, जिससे सिर शर्म से झुक जाता है। खाने की वस्तुओं में मिलावट- नकली मिठाइयाँ- सिंथेटिक दूध, नकली देसी घी, विदेशी खादों के अधिक प्रयोग से सब्जियों फलों में प्राकृतिक स्वाद व गुण नहीं रहा है। शराब का सेवन बहुत बढ़ गया है। डॉक्टरों के यहाँ भारी भीड़ दर्शाती है कि लोगों के स्वास्थ्य से खिलवाड़ की जा रही है। नैतिक शिक्षा- धर्म शिक्षा के अभाव में युवक भटक रहे हैं। सस्ते व शीघ्र न्याय तथा कठोरतम दण्ड से अपराधों में कमी आ सकती है।

संविधान में किसी भी समुदाय को न तो बहुसंख्यक कहा गया है और न ही किसी को अल्पसंख्यक। स्पष्ट परिभाषा के अभाव में सरकारों ने मुस्लिम - इसाई - सिख - बौद्ध - पारसी को अनौपचारिक रूप से अल्पसंख्यक मानना शुरू कर दिया क्योंकि इनकी जनगणना अलग से होती रही है हालांकि यह कार्य संविधान की मूल भावना के विरुद्ध है। तथाकथित हिन्दू हृदय सम्राट अटल बिहारी बाजपेयी ने १९७८ में केन्द्रीय अल्पसंख्यक आयोग बनवाया था। इस आयोग के अधिनियम में कांग्रेसी सरकार ने १७.०५.१९९२ में यह जोड़ दिया कि अल्पसंख्यक वह समुदाय है जिसे केन्द्रीय सरकार अधिसूचित करे। भारत सरकार के इस कार्य से अल्पसंख्यकों का व्यवहार बिल्लियों जैसा आक्रामक होना शुरू हो गया। भारत सरकार ने हिन्दुओं को बहुसंख्यक का सरकारी दर्जा नहीं दिया। उनकी उपेक्षा व अवहेलना की गई जिसके कारण हिन्दू सर्वत्र चूहे की भाँति रह रहा है। सभी जानते हैं कि चूहे सदैव बिल्लियों से डरते रहते हैं।

अल्पसंख्यक आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष शमशाद अहमद ने केन्द्रीय गृह मन्त्री लालकृष्ण आडवाणी को ज्ञापन देकर कहा कि जिन छह राज्यों में हिन्दू अल्पसंख्यक हैं उन्हें राज्य स्तर पर अल्पसंख्यक घोषित करने के लिए कानून बनाया जाए ताकि उनका अयोग उनके हितों की रक्षा कर सके। सत्ता सुख भोग रहे आडवाणी ने इस दिशा में कुछ नहीं किया।

यह अत्यन्त खेद का विषय है कि १९४७ में पाकिस्तान और पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से आए हुए हिन्दू परिवारों को अभी तक राज्य की नागरिकता नहीं दी गई है और १९९० में कश्मीर घाटी से पलायन कर गए हिन्दू शरणार्थियों का पुर्नवास अभी तक नहीं हुआ है। १९९७ में मिजोरम के हिन्दू वनवासियों को पलायन करना पड़ा जो अब त्रिपुरा के शिविरों में रह रहे हैं। यह कितनी शर्म की बात है कि खंडित भारत में हिन्दू शरणार्थी के रूप में कई सालों से शिविरों में रह रहा है किन्तु उनके सुरक्षित पुनर्वास हेतु स्वतन्त्रता दिवस की पूर्व सन्ध्या पर देश के राष्ट्रपति की ओर से प्रसारण में और स्वतन्त्रता दिवस पर लाल किले की प्राचीर से प्रधानमंत्री के भाषण में इनके बारे में एक शब्द भी नहीं कहा जाता है क्योंकि ये हिन्दू हैं और हिन्दू की उपेक्षा व अवहेलना करना इनकी आदत बन चुकी है। दुर्भाग्य हिन्दू का है क्योंकि यू.पी.ए. तथा एन.डी.ए. की सोच उसके बारे में लगभग एक जैसी है।

६६ वर्षों में हिन्दू का प्रतिशत ८८ से घटकर ८१ रह गया है। गिरावट रोकने के विषय इनकी कार्य सूची में ही नहीं हैं।

❑❑

"दयानन्द सन्देश" परिवार की ओर से समस्त देशवासियों को स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ व बहुत-२ बधाई। परमात्मा हमें शक्ति दे कि हम अपने प्राचीन गौरव को पुनः प्राप्त कर सकें।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। – महर्षि दयानन्द

परमेष्ठी प्रजापतिः ऋषिः। अग्निः = ईश्वरः भौतिकोऽग्निः देवता। स्वराङ् जगती छन्दः।। निषादः स्वरः।।

यज्ञशालादिगृहाणि कीदृशानि रचनीयानीत्युपदिश्यते।।

यज्ञशाला आदि घर कैसे बनाने चाहिए, इस विषय का उपदेश किया जाता है।

ओ३म्–

भूताय॑ त्वा नारा॑तये॒ स्व॑र॒भि॒वि॒ख्यै॑षं॒ दृꣳह॑न्तां॒ दुर्या॑: पृथि॒व्यामु॒र्व᳕न्तरि॑क्ष॒मन्वे॑मि। पृथि॒व्यास्त्वा॒ नाभौ॑ सादया॒म्यदि॑त्या॒ऽउपस्थेऽग्ने॑ ह॒व्यꣳर॑क्ष ।।

यजु० १-११।।

पदार्थः–(भूताय) उत्पन्नानां प्राणिनां सुखाय **(त्वा)** तं कृषिशिल्पादिसाधनम् **(न)** निषेधार्थे **(अरातये)** रातिर्दानं न विद्यते यस्मिन् तस्मै शत्रवे बहुदानकरणार्थं दारिद्र्यविनाशाय वा **(स्वः)** सुखमुदकं वा। **स्वरिति सुखनामसु पठितम्।। निघं० ३।६।। उदकनामसु च।। १।१२।। (अभिविख्येषम)** अभितः= सर्वतो विविधं पश्येयम्। अत्राभिव्योरुपपदे चक्षिङ् इत्यस्याशीर्लिङ्यार्धधातुकसंज्ञामाश्रित्य ख्याञ् आदेशः। लिङ्याशिष्यङित्यङ् सार्वधाुकसंज्ञाश्रित्य च या इत्यस्य इय् आदेश। सकारलोपाभाव इति। **(दृꣳशः हन्ताम्)** दृंहन्तां वर्धयन्ताम्। अत्रान्तर्गतो ण्यर्थः **(दुर्य्याः)** गृहाणि। दुर्य्या इति गृहनामसु पठितम्।। निघं ३।४। **(पृथिव्याम्)** विस्तृतायां भूमौ **(उरु)** बहु **(अन्तरिक्षम्)** अवकाशं सुखेन निवासार्थम् **(अनु)** क्रियार्थे **(एमि)** प्राप्नोमि **(पृथिव्याः)** शद्धाया विस्तृताया भूमेः **(त्वा)** तं पूर्वोक्तं यज्ञम् **(नाभौ)** मध्ये **(सादयामि)** स्थापयामि **(अदित्याः)** विज्ञानदीप्तेर्वेदवाचः सकाशादन्तरिक्षे मेघमंडलस्य मध्ये, **अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति मंत्रप्रामाण्यात्।। ऋ. १।८।६।१०।। अदितिरिति वाङ्नामसु पठितम्।। निघं० १।११। पदनामसु च।। निघं० ४।१।। (उपस्थे)** समीपे **(अग्ने)** परमेश्वर! **(हव्यम्)** दातुं ग्रहीतुं योग्यं क्रियाकौशलं सुखं वा **(रक्ष)** पालय।। अयं मंत्रः श० १।१।२।२०-२३ व्याख्यातः।। ११।।

प्रमाणार्थ – (स्वः) 'स्वः' शब्द निघं० (३।६) में सुख नामों में पढ़ा है और निघं० (१।१२) में उदक (जल) नामों में भी पढ़ा है। (अभिविख्येषम्) यहा अभि-वि के उपपद रहते 'चक्षिङ्' धातु को आशीर्लिङ् में आर्धधातुक संज्ञा होने से 'ख्याञ्' आदेश है और 'लिङ्याशिष्यङ्' से अङ, पुनः सार्वधातुक संज्ञा के आश्रय से 'या' को 'इय' हुआ एवं सकार का लोप नहीं है। (दृंहन्ताम्) यहा अन्तर्भावित ण्यर्थ है (दुर्य्याः) 'दुर्य्याः' शब्द निघं० (३।४) में गृहनामों में पढ़ा है। (अदित्याः) 'अदिति' शब्द ऋ० (१।८।६।१०) में द्यौ और अन्तरिक्ष अर्थ में आया है। निघं० (१।११) में 'अदिति' शब्द वाणी के नामों में पढ़ा है। निघं० (४।१) में 'अदिति' शब्द पदनामों में पढ़ा है। इस मन्त्र की व्याख्या शत० (१।१।२।२०-२३) में की गई है।१।११।।

सपदार्थान्वयः – अहं यं भूताय उत्पन्नानां प्राणिनां सुखाय **अरातये=अदानाय** रातिः= दानं न विद्यते यस्मिन्

www.thearyasamaj.org

तस्मै शत्रवे, बहुदानकरणार्थं, दारिद्रयविनाशाय वा **अदित्याः** विज्ञानदीप्तेर्वेदवाचः सकाशादन्तरिक्षे मेघमण्डलस्य मध्ये **उपस्थे** समीपे **यज्ञं सादयामि** स्थापयामि (**त्वा**)= तं (तं) कृषिशिल्पादिसाधिनं (न) **कदाचिन्न त्यजामि।**

हे विद्वांसो! भवन्तः पृथिव्यां विस्तृतायां भूमौ **दुर्य्याः** गृहाणि **दृंहन्तां=वर्धयन्ताम्। अहं पृथिव्याः** शुद्धाया विस्तृताया भूमेः **नाभौ=मध्ये, येषु गृहेषु स्वः** सुखमुदकं वा **अभिविख्येषम्** अभितः सर्वतो विविधं पश्येयम्, **यस्यां पृथिव्यां** विस्तृतायां भूमौ **उरु** बहु **अन्तरिक्षम्** अवकाशं सुखेन निवासार्थं **च, अन्वेमि** प्राप्नोमि।

हे अग्ने=जगदीश्वर! परमेश्वर! **त्वमस्माकं हव्यं** दातुं ग्रहीतुं योग्यं क्रियाकौशलं सुखं वा **सर्वदा रक्ष** पालय। **इत्येकोऽन्वयः।।**

भाषार्थ— मैं जिस यज्ञ को **(भूताय)** उत्पन्न प्राणियों के सुख के लिये **(अरातये)** शत्रु के लिये, बहुत दान करने के लिए अथवा दरिद्रता के विनाश के लिये **(अदित्याः)** विज्ञान के दीपक वेद की वाणी से आकाश में मेघमण्डल के **(उपस्थे)** मध्य में **(सादयामि)** स्थापित करू **(त्वा)** उस कृषि और शिल्प आदि के साधक यज्ञ को **(न)** कभी न छोड़ू।

हे विद्वानो! आप **(पृथिव्याम्)** इस विस्तृत भूमि पर **(दुर्याः)** घरों को **(दृंहन्ताम्)** बढ़ावें। मैं **(पृथिव्याः)** शुद्ध विस्तृत भूमि के **(नाभौ)** मध्य में जिन घरों में **(स्वः)** सुख एवं जल आदि सुख के साधन हों, उन्हें **(अभिविख्येषम्)** सब ओर देखूँ, और जिस **(पृथिव्याम्)** विस्तृत भूमि पर **(उरु)** बहुत **(अन्तरिक्षम्)** सुख से निवास के लिये अवकाश हो, उसे **(अन्वेमि)** प्राप्त करूँ।

हे **(अग्ने)** जगत् के स्वामी परमेश्वर! आप हमारे **(हव्यम्)** परस्पर लेने-देने योग्य क्रियाकौशल वा सुख की सदा **(रक्ष)** रक्षा करो।। यह मन्त्र का पहला अन्वय है।

अथ द्वितीयमन्वयमाह—हे अग्ने=जगदीश्वर! अहं भूताय उत्पन्नानां प्राणिनां सुखाय **अरातये** रातिः=दानं न विद्यते यस्मिन् तस्मै शत्रवे बहुदानकरणार्थं, दारिद्रयविनाशय वा **पृथिव्याः** शुद्धाया विस्तृताया भूमेः **नाभौ** मध्ये ईश्वरत्वो **पास्यत्वाभ्यां स्वः=सुखरूपं** सुखमुदकं वा **(त्वा)=त्वामभिविख्येषम्=प्रकाशयामि** अभितः सर्वतो विविधं पश्येयम्।

भवत्कपयेमेऽस्माकं दुर्याः=गृहादयः पदार्थास्तत्रस्था मनुष्यादयः प्राणिनो दृंहन्ताम्=नित्यं वर्धन्ताम्।

अहं पृथिव्यां विस्तृतायां भूमौ **उरु** बहु **अन्तरिक्षम्=व्यापकम्** अवकाशं सुखेन निवासार्थम् **उपस्थे** समीपे **त्वा=त्वामन्वेमि=नित्यं प्राप्नोमि (न) न कदाचित् त्वा=त्वां त्यजामि। त्वमिदमस्माकं हव्यं** दातुं ग्रहीतुं योग्यं क्रियाकौशलं सुखं वा **सर्वदा रक्ष** पालय।। **इति द्वितीयः।।**

दूसरा अन्वय— हे **(अग्ने)** जगदीश्वर! मैं **(भूताय)** उत्पन्न प्राणियों के सुख के लिये **(अरातये)** शत्रु के लिये, बहुत दान करने के लिए अथवा दरिद्रता के विनाश के लिए **(पृथिव्याः)** शुद्ध विस्तृत भूमि के **(नाभौ)** मध्य में ईश्वर और उपास्य होने से **(स्वः)** सुखस्वरूप एवं सुख शान्ति के निमित्त **(त्वा)** आपको **(अभिविख्येषम्)** सब ओर विविध प्रकार से देखू।

आपकी कृपा से ये हमारे **(दुर्याः)** गृह आदि पदार्थ और वहा रहने वाले मनुष्य आदि प्राणी **(दृंहन्ताम)** नित्य वृद्धि को प्राप्त हों।

मैं **(पृथिव्याम्)** विस्तृत भूमि पर **(उरु)** बहुत **(अन्तरिक्षम्)** व्यापक एवं सुख से निवास के लिए अवकाश **(उपस्थे)** में **(त्वा)** आपको **(अन्वेमि)** प्राप्त करू और **(त्वा)** आपको **(न)** कभी न छोडूं। आप हमारे इस **(हव्यम्)** परस्पर देने-लेने योग्य क्रिया कौशल वा सुख की सदा **(रक्ष)** रक्षा कीजिये। यह मन्त्र का दूसरा अन्वय है।

भावार्थ— अत्र श्लेषालङ्कारः। ईश्वरेण मनुष्यं आज्ञाप्यते— हे मनुष्य! अह त्वां सर्वेषां भूतानां सुखदानाय पृथिव्यां रक्षयामि।

भावार्थ— इस मन्त्र में श्लेष अलंकार है। ईश्वर मनुष्य को आज्ञा देता है- हे मनुष्य! मैं तुझे सब प्राणियों को सुख देने के लिए पृथिवी पर स्थापित करता हू।

www.thearyasamaj.org

गृहस्थ के कर्तव्य

(उत्तरा नेरुर्कर, बंग्लौर, मो. ०९८४५०५८३१०)

गृहस्थी होते हुए, हम अधिकतर धनार्जन और परिवार-पोषण में लगे रहते हैं अवश्य ही ये गृहस्थी के मुख्य कर्तव्य हैं, परन्तु मनु बताते हैं कि गृहस्थी के अन्य भी विशेष कर्तव्य हैं, जिनको हम प्रायः भूले हुए हैं। इस लेख में उन कर्तव्यों पर मैं कुछ प्रकाश डाल रही हूँ।

पञ्च महायज्ञों के विषय में स्वामी दयानन्द ने विस्तार से बताया है। सो, उस विषय में मुझे बुद्धिमान् पाठकों के लिए कुछ नहीं जोड़ना, यह छोड़कर कि ये कर्म गृहस्थी के ही विशेष कर्तव्य हैं। इन्हीं कर्तव्यों से, विशेपकर, बलिवैश्वदेव यज्ञ और अतिथि यज्ञ से वह अन्य आश्रमों, व अन्य प्राणियों को भी, पालता है। इसी कारण मनु कहते हैं-

यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्जयेष्ठाश्रमो गृही।।

मनुस्मृतिः ३/७८।।

अर्थात् क्योंकि बाकी तीनों ही आश्रमी गृहस्थ से प्रति अन्न, वस्त्रादि दान प्राप्त करते हैं, इसलिए वस्तुतः गृहस्थी ही उनको धारण करता है। इस कारण से, गृहस्थाश्रम सबमें बड़ा है। और अन्यत्र- दैवकर्मणि युक्तो हि विभर्तीदं चराचरम्।। मनु. ३/७५।।- गृहस्थ देवयज्ञ के द्वारा सारे चराचर जगत् का भरण करता है।

वेदान्ती लोग -भज गोविन्दम्' आदि शंकाराचार्य कृतियों में बहकर, गृहस्थाश्रम को कुत्सित बताकर, सब को संन्यास धारण करने का प्रवचन देते हैं। परन्तु वे भूल जाते हैं कि यदि सचमुच सबने उनकी बात मान ली, तो उनकी अजीविका ही न रहेगी। और जिससे उनको अजीविका मिल रही है, वह इतना बुरा तो नहीं हो सकता।

मनु ने जहाँ अपनी रुचि के अनुसार धार्मिक हिंसा-रहित जीविका ग्रहण करने का उपदेश दिया है, वहीं उन्होंने सिखाया है कि साँसारिक काम उतना ही उठाओ जितने से तुम्हारा जीवन सुगमता से व्यतीत हो, बहुत अधिक धन जुटाने में मत लगो। ये स्वास्थ्य-रक्षण के लिए भी कहा है, और इसलिए भी कि प्रतिदिन कुछ समय स्वाध्याय के लिए निकालना गृहस्थी का सबसे बड़ा धर्म है। यहाँ 'स्वाध्याय' से वेदादि मोक्षपरक ग्रन्थों का अध्ययन अभिप्रेत है। मनु कहते हैं –

वेदमेवाभ्यसेन्नित्यं यथाकालमतन्द्रितः।
तं ह्यस्याहुः परं धर्ममुपधर्मोऽन्य उच्यते।।

मनु० ४/१४७।।

अर्थात् जितना समय मिले, उतना समय, बिना आलस्य किए, नित्य वेदाभ्यास करना चाहिए क्योंकि वही परम धर्म है; अन्य सभी धर्म उपधर्म ही हैं। पढ़े हुए को यथाशक्ति पढ़ाना भी चाहिए-

सर्वान् परित्यजेतर्थान् स्वाध्यायस्य विरोधिनः।
यथातथाध्यापयंस्तु सा ह्यस्य कृतकृत्यता।।

मनु० ४/१७।।

जो भी कार्य स्वाध्याय के विरोधी हैं, उन सभी को छोड़ता जाए और किसी भी तरह थोड़ा पढ़ाए क्योंकि स्वाध्याय की कृतकृत्यता इसी में है। वास्तव में, स्वाध्याय ऋषियज्ञ ही है, परन्तु इस भाग को हम अनेक बार भूल जाते हैं।

दान के विषय में मनु एक चेतावनी देते हैं। एक ओर तो नित्य दान करना गृहस्थी का धर्म है-

दानधर्म निषेवेत नित्यमैष्टिकपौर्तिकम्।
परितुष्टेन भावेन पात्रमासाद्य शक्तितः।।

मनु० ४/२२७।।

अर्थात् सुखी होकर (वस्तु से मोह पूर्णतया हटाते हुए), गृहस्थी को नित्य यथाशक्ति ऐष्टिक= यज्ञों का आयोजन, और पौर्तिक= रुग्णालय, पाठशाला, आदि बनवाना, और पात्र को ढूँढ कर उसको दान देना चाहिए; वहीं दूसरी ओर, पात्र का योग्य होना बहुत ही आवश्यक है। गलत पात्र को देने से पुण्य तो क्या; केवल पाप का ही अर्जन होता है-

त्रिष्वप्येतेषु दत्तं हि विधिनाप्यर्जितं धनम्।
दातुर्भवत्यनर्थाय परत्रादातुरेव च।। मनु० ४/१९३।।

www.thearyasamaj.org

तीन प्रकार के कुपात्रों को देने से धर्मानुसार अर्जित धन भी, दाता के लिए इसी जन्म में अनर्थ का कारण बन जाता है और दान लेने वाले के लिए परजन्म में दुःख पहुँचाता है। ये तीन प्रकार के कुपात्र कौन से हैं, सो ये वे ही हैं, जिनको अनेकों जन आज आदर-सम्मान से अपने घर में बुलाते हैं और जिनके लिए हंसते-हंसते अपनी तिजोरी का ताला खोल देते हैं- धार्मिक प्रवचनकर्त्ता। मनु बताते हैं कि ये तीन प्रकार के होते हैं। एक तो जो बड़ी-बड़ी बातें करे, अपने चमत्कारों, अपने बड़े-बड़े कार्यों, या अपने महान ज्ञान की झलक देके भीरू जन को रिझाते हैं। दूसरे वे जो अपने को विनम्र दिखाते हुए अपने को ज्ञानी साबित करते हैं। तीसरे वे जो वेदों को न जानते हुए भी धर्म का उपदेश देते फिरते हैं। आज के समय में, क्या कोई भी धार्मिक प्रवचनकर्ता बच रहता है?

गृहस्थ का सुखी होना बहुत आवश्यक है। तभी वह धर्म के मार्ग पर चल पाता है सुखवर्धन के उपाय बताते हुए मनु कहते हैं कि, जहाँ तक हो सके जाविका अपने वश में होनी चाहिए, क्योंकि जो-जो परवश होता है, वह दुःखकारी होता है-

सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्
एतद्विद्यात् समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः।।
मनु० ४/१६०।।

परन्तु हमारे प्रयत्नों से जो भी हमें प्राप्त हो, उससे हमें सन्तुष्ट हो जाना चाहिए, चाहे हम और वृद्धि के लिए क्यों न प्रयासरत बने रहें। सन्तुष्टि के बिना सब धन-ऐश्वर्य मिट्टी समान हैं-

सन्तोषं परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत्।
सन्तोषमूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः।। मनु. ४/१२।।

अर्थात् परम सन्तोष में स्थित हो, सुख चाहने वाला इच्छाओं को वश में रखे, क्योंकि सन्तोष ही सुख का मूल है, और असन्तोष दुःख का जनक है। यदि अनेक प्रयासों के बाद भी हम दीन बने रहें, तब भी हमें अपनी अवस्था के लिए अपने को दोष नहीं देना चाहिए और श्री की प्राप्ति को कभी भी दुर्लभ न समझते हुए, मृत्यु पर्यन्त प्रयत्न करते ही रहना चाहिए-

नात्मानमवमन्येत पूर्वाभिरसमृद्धिभिः।
आमृत्योः श्रियमन्विच्छेन्नैनां मन्येत दुर्लभाम्।।
मनु० ४/१३७।।

स्वभाव के विषयमें, वे संक्षप में बताते हैं-

नास्तिक्यं वेदनिन्दां च देवतानां च कुत्सनम्।
द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत।।
मनु० ४/१६३।।

हमें क्या-क्या नहीं होना चाहिए। नास्तिक, वेदों की निन्दा करने वाला, विद्वानों की निन्दा करने वाला, द्वेष, कुटिल, अभिमान, क्रोध या कटाक्ष करने वाला। चाहे हमें वेद का ज्ञान न हो, फिर भी हमें, विद्वानों के वचन पर श्रद्धा रखते हुए, वेदों के प्रति आदर भाव बनाए रखना चाहिए। विद्वानों का अनादर और अपने ऊपर अभिमान हमें ज्ञानप्रकाश से वञ्चित रखेगा। द्वेष, दम्भ, क्रोध और तैक्ष्ण्य हमारे मन को सबसे अधिक मलिन करते हैं। दुःख भी हमें इतना पाप की ओर प्रेरित नहीं करता, जितना ये चारों भावनाएँ करती हैं। इसलिए इनको जल्दी से जल्दी त्याग देना चाहिए।

दृढकारो मृदुर्दान्तः क्रूराचारैरसंवसन्।
अहिंस्रो दमदानभ्यां जयेत् स्वर्गं तथाव्रतः।।
मनु० ४/२४६।।

हमें क्या-क्या होना चाहिए, इस विषय में कहते हैं- सदा धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहना चाहिए, जितेन्द्रिय और दानशील होना चाहिए। इससे गृहस्थ शीघ्र ही महान सुख को प्राप्त करता है। अत्यन्त सुन्दरता से मनु ने गृहस्थ के स्वभाव का विवरण दे दिया।

गृहस्थ का विशेष धर्म तो पञ्च महायज्ञ ही है, जिन्हें कोई और आश्रमी नहीं करता। ब्रह्मचारी ऋषियज्ञ और देवयज्ञ ही करते हैं, परन्तु गृहस्थ को पाँचों ही यज्ञ करने होते हैं। अपने परिवार, समाज और राष्ट्र को उसी के कर्म धारण करते हैं। इन सब कर्तव्यों के साथ-साथ उसे सबसे अधिक भोग भी प्राप्त होता है। धर्म पर तो सभी आश्रमी चलते हैं, परन्तु अर्थ और काम का आनन्द गृहस्थी ही लेता है। इसलिए वह अपने सब कर्तव्यों को हंसते-हंसते निर्वाह कर लेता है। सुनने में अत्यधिक कठोर लगने वाले ये व्रत वास्तव में इतने कठिन भी नहीं होते।
□□

www.thearyasamaj.org

सुप्रीम कोर्ट का फैसला

(धर्मपाल आर्य, २-एफ, कमला नगर, दिल्ली-७)

मैं सोच रहा था कि अबकी बार स्वतन्त्रता दिवस के विषय में अपने पाठकों से चर्चा करूँगा। एतदर्थ इससे सम्बन्धित मन में उठे भावों को क्रमानुसार जोड़ने की कोशिश कर उन्हें अन्तिम रूप दे ही रहा था कि अचानक सुप्रीम कोर्ट के दो फैसले ऐसे आये कि मुझे उन पर लिखने के लिए बाध्य होना पड़ा। **प्रथम निर्णय** यह कि यदि निचली अदालत ने किसी मामले में अपराधी मानते हुए सजा सुना दी है तो ऐसा व्यक्ति चुनाव नहीं लड़ सकेगा; यदि वह उस समय (जिस समय सजा सुनाई गई है) सांसद या विधायक है तो उसकी वह सदस्यता समाप्त हो जायेगी। इसके साथ ही जेल में बन्द तथा न्यायिक वा पुलिस हिरासत में रहने वाला भी चुनाव के अयोग्य रहेगा। इसके बाद सुप्रीत कोर्ट का **दूसरा** महत्वपूर्ण फैसला यह था कि राजनीतिक दल अब जाति आधारित रैली और सम्मेलनों का आयोजन नहीं कर सकेंगे। सुप्रीम कोर्ट के उपरोक्त फैसले निश्चित ही ऐतिहासिक होने के साथ-२ प्रशंसनीय भी हैं। क्योंकि राजनेताओं ने अपनं निहित स्वार्थों के कारण इस देश की राजनीति में जातिवाद का जहर घोला है। उसके कारण यह देश अनिश्चितता, अस्थिरता, अव्यवस्था और अन्याय व अराजकता कह अन्तहीन दौर से गुजर रहा है। **जातिवाद** के विषैले वृक्ष को सींचने में राजनेताओं ने अपनी पूरी ताकत झोंक रखी है। जातिवाद राजनैतिक दलों के लिए सेवा का माध्यम न होकर सत्ता हथियाने का एक ओछा हथकण्डा रहा है। जो लोग यह कहते हैं कि जातिवाद प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में समाज में हमेशा से रहा है, तो इस विषय की गहराई में जाये बिना मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहूँगा कि पहले समाज में वर्ण व्यवस्था थी। वर्ण व्यवस्था का निर्धारण गुण कर्म के आधार पर होता था न कि जन्मना जाति के आधार पर। आर्यसमाज उसी वर्ण व्यवस्था का प्रबल पक्षधर है। अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसा क्या हो गया कि सुप्रीम कोर्ट को जाति-आधारित सम्मेलनों पर प्रतिबन्ध लगाना पड़ा। इस सन्दर्भ में मैं यही कहना चाहूँगा कि राजनीतिक दलों (यूं तो सभी लेकिन विशेष रूप से सपा, बसपा, जद-यू) ने सत्ता पाने के लिए जिस जातिवादी शैली का सहारा लिया उससे समाज और संविधान की सद्भावना तथा सम्प्रभुता के लिए खतरा पैदा हो गया था, जिसके कारण देश में जातीय संघर्षों की संभावना बलवती हो गई थी। जो कार्य इस देश के सत्ताधारी दल को करना चाहिए था वह कार्य देश हित को ध्यान में रखते हुए इस देश की न्यायपालिका ने कर दिया। ब्राह्मण, राजपूत, जाट, कुर्मी, वैश्य, दलित तथा पञ्जाबी जैसे सम्मेलन करके राजनीतिक दल देश की एकता और सद्भावना को नष्ट कर देश में फूट डालने का काम कर रहे हैं। मैं कोर्ट के उपरोक्त फैसले को अपूर्व और ऐतिहासिक कहूँगा। इस ऐतिहासिक निर्णय में देश के जागरूक संचार तन्त्र की तथा प्रजातान्त्रिक प्रणाली के प्रति असंख्यों आस्थावान नागरिकों की भूमिका भी प्रशंसनीय है। इसके बाद जो कार्य इस देश के नागरिकों का है, वह भी कम चुनौती भरा नहीं है क्योंकि गत १० जुलाई को दिए गए युगान्तकारी निर्णय से सकपकाए समस्त राजनीतिक दल सकते में हैं, इन्हें उपरोक्त निर्णय सहज में हजम हो जायेगा इसकी संभावना बहुत कम है। मेरा ऐसा मानना है कि ये दल इसके विरोध में कोई न कोई हथकण्डा अवश्य तलाशेंगे, इस लिए हम सबकी यह सामूहिक जिम्मेदारी बनती है कि उपरोक्त निर्णय के विरुद्ध राजनीतिक दलों का कोई भी ओछा हथकण्डा सफल न होने पाए। इसके लिए और अधिक जागरूकता की आवश्यकता है। राष्ट्र-निर्माण में माननीय न्यायालय का उपरोक्त फैसला नींव का पत्थर साबित हो सकता है बशर्ते उस निर्णय के प्रति हम स्वामीभक्त रहें। कोर्ट ने अपना साहसिक कदम रखा है, आगे इस देश के नागरिकों का साहस परीक्षा की कसौटी पर है कि वे देश की सामाजिक समरसता संविधान की

www.thearyasamaj.org

सद्भावना और अपनी प्राचीन भाई-चारे की उदात्त भावना के साथ हैं अथवा उन्हीं जातिवादी राजनीतिक दलों के केवल वोट बैंक बनकर रह जाते हैं। यह तो भविष्य ही बताएगा। इसके साथ सुप्रीम कोर्ट ने दूसरा जो फैसला दिया उसे मैं भारतीय राजनीति की शल्य चिकित्सा की दिशा में प्रथम कदम कह सकता हूँ। सुप्रीम कोर्ट का यह निर्णय कि यदि ट्रायल कोर्ट द्वारा किसी सांसद अथवा विधायक को आपराधिक मामले में सजा सुना दी जाती है तो उसे तुरन्त अयोग्य घोषित कर दिया जायेगा। सजा प्राप्त सांसदों तथा विधायकों को अयोग्य घोषित होने से बचाने वाली १९५१ जन प्रतिनिधित्व कानून की धारा ८ (४) को भी सुप्रीम कोर्ट ने समाप्त कर दिया है। निःसन्देह उपरोक्त निर्णय अपराधीकरण की दल-दल में फंस चुकी राजनीति को स्वच्छ करने के लिए एक वरदान साबित हो सकता है। इस देश की राजनीति में अपराधियों के दखल ने शासन व्यवस्था को पंगु बना दिया है लेकिन उपरोक्त फैसला धनबल और बाहुबल के शिकंजे में फंसी राजनीति पर से विश्वास हटाने वाले भारतीयों के लिए संजीवनी और आशा की किरण साबित हो सकता है।

पाठक कह सकते हैं कि मैंने होगा की जगह पर **हो सकता है** का प्रयोग क्यों किया? तो मैं प्रबुद्ध पाठकों को बता दू कि जब कोर्ट किसी को सजा देगा या दोषी ठहरायेगा। उसके बाद ही तो व्यक्ति लोकसभा की, विधान सभा की या अन्य किसी की सदस्यता के अयोग्य होगा। दोषी ठहराये जाने या पाये जाने पर ही तो कोई व्यक्ति चुनाव लड़ने के अयोग्य होगा। लेकिन कोई मुझे यह समझाने का कष्ट करेगा कि किसी पर आरोप सिद्ध होने/करने की तथा सिद्ध होने पर सजा निर्धारित करने की समय-सीमा निर्धारित क्यों नहीं है। क्या न्याय के लिए निश्चित समय सीमा का निर्धारण नहीं होना चाहिए? न्याय में विलम्ब करना क्या न्याय को नकारने के बराबर नहीं है? क्या मेरा यह सन्देह सही नहीं है कि यदि न्याय प्रक्रिया में तेजी नहीं लायी गयी, तो न्याय व्यवस्था के दुरुपयोग की संभावना बढ़ेगी। लगभग ३८ वर्ष बाद पूर्व केन्द्रीय रेलमन्त्री ललित नारायण मिश्र की हत्या का फैसला आया और सजा पाने वालों ने ऊपरी अदालत में उक्त फैसले के खिलाफ अपील दायर कर दी। न्याय की यह प्रक्रिया पीडित को कैसा न्याय देगी इसका सहज ही अन्दाजा लगाया जा सकता है। यह तो केवल एक उदाहरण मात्र है। आँकड़े बताते हैं कि देश/प्रदेश की लोकसभा और विधानसभा के सांसदों और विधायकों की कुल संख्या (४८०७) में से लगभग ३० प्रतिशत (१४६०) सदस्यों के खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज हैं, जिनमें से ६८ गम्भीर प्रकृति के हैं। न्याय व्यवस्था का स्थिति यह है कि अपराधी केस का निर्णय होने तक चुनाव लड़ता है, जीतता है, जीतने के बाद अपने अधिकारों का प्रयोग अपने कुकृत्यों पर परदा डालने में करता है और हमारी न्याय प्रणाली बेबस नजर आती है। ऐसी स्थिति में अपराधियों के हौसले बुलन्द हो जाते हैं। सुप्रीम कोर्ट का निर्णय बीमार हो चुकी राजनीति के लिए रामबाण है किन्तु इसकी सार्थकता तभी है, जब इस देश की न्याय प्रक्रिया में तेजी आये। यदि एक-२ मामले में निर्णय ३०-३० साल के बाद आयेगा तो पाठक खुद ही सोचें कि उपरोक्त निर्णय अपराधियों और अपराधों को कितना नियन्त्रित कर पायेगा? मुझे यह कहने में लेशमात्र भी संकोच नहीं कि न्याय में अत्यधिक विलम्ब होना हमारी न्याय व्यवस्था के दुर्बल पक्ष को दर्शाता है। इसको दूर करना आज की आवश्यकता है। जातीय सम्मेलनों पर रोक, अपराधी छवि के लोगों पर वैधानिक पदों के लिए चुनाव लड़ने पर प्रतिबन्ध दोनों ही फैसले राष्ट्र की एकता को, राष्ट्र की सांस्कृतिक परम्परा को, देश के सामाजिक ताने बाने को, संविधान की सद्भावना को, पारस्परिक भाईचारे को सुदृढ़ बनाने में, संवारने में, संभालने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेंगे, ऐसा मुझे विश्वास है। जन्मना जाति पाति की भावना को एक हद तक लगाम लगाकर माननीय उच्चतम न्यायालय ने वैदिक परम्परा "वर्ण व्यवस्था" का समर्थन किया है। आओ न्यायालय को मिलकर साधुवाद दें। इस आशा के साथ मैं अपने लेख का समापन करना चाहूँगा कि न्याय प्रक्रिया में तेजी भी अवश्य आयेगी, जिससे माननीय सुप्रीम कोर्ट के दोनों ही फैसलों की दृढ़ता के साथ-२ अमिट गरिमा और महिमा भी दिखेगी।

❑❑

www.thearyasamaj.org

इतिहास की परतों के नीचे से -

महर्षि दयानन्द जी के जीवन के कुछ प्रसंग

(राजेन्द्र जिज्ञासु, वेद सदन, अबोहर-१५२११६)

गत तीन वर्ष से दिन-रात श्रद्धेय लक्ष्मण जी द्वारा लिखित ऋषि जीवन के अनुवाद व सम्पादन पर लगाये हैं। यह अब तक का सबसे बड़ा ऋषि जीवन है। यह कार्य करते हुए हमने इस ग्रन्थ की एक-एक पंक्ति, एक-एक पैरा और एक-एक पृष्ठ पर बहुत चिन्तन-मनन किया है। इसी के साथ महर्षि के जीवन से जुड़ी बहुत सी सामग्री तथा अनेक ग्रन्थों को भी देखने का अवसर मिला। ऋषि जीवन की एक-एक घटना, कथन व वचन पर इतिहास की दृष्टि से विचारा। इतिहास की दृष्टि से एक-एक घटना की व्याख्या (Interpretation) श्रद्धेय पं० चमूपति जी की शैली से करने का प्रयास किया है। इसमें हम कितने सफल रहे, यह तो प्रबुद्ध पाठक तथा गुणी विद्वान् ही बतायेंगे।

हम इतिहास की परतों के नीचे से बहुत कुछ खोजकर लाये हैं। यह हमें सन्तोष है। ग्रन्थ की पृष्ठ संख्या बढ़ती ही गई इस लिये कहीं रूकना पड़ा। दूसरे भाग का मूल्य भी इसी कारण बढ़ाना पड़ गया। अभी और भी बहुत अलभ्य सामग्री है, जिसको प्रकाश में लाने की हमने ठान ली है। आज कुछ प्रसंग आर्य मुसाफ़िर के प्रेमियों की सेवा में रखते हैं। इनमें से कुछ घटनायें कुछ लेखकों के ध्यान में हैं परन्तु उनका महत्त्व और इतिहास में यथोचित स्थान हम इतिहास प्रेमियों के सामने न ला सके।

ऋषि की शव यात्रा में लाला जीवनदास जी :- किसी भी लेख में और किसी जीवन चरित्र में (पं० लेखराम जी के ग्रन्थ में भी) किसी ने कभी यह नहीं पढ़ा होगा कि श्री लाला जीवन दास जी ने भी महर्षि के शव को कंधा दिया था। श्री हरविलास जी शारदा ने अर्थी को कंधा दिया, यह तो सभी जानते हैं परन्तु लाला जीवनदास जी ने भी अर्थी को कंधा दिया, यह पाठकों को इसी ग्रन्थ में पढ़ने को मिलेगा। श्रद्धेय लक्ष्मण जी का पूज्य लाला जीवनदास जी से बहुत निकट का सम्बंध रहा। उन्होंने उनके संस्मरण लेकर ही यह घटना दी है अतः घटना प्रामाणिक और ऐतिहासिक तथ्य है।

कंधा बदलना पड़ा :- लाला जी ने बताया कि अर्थी इतनी भारी थी कि मैं कुछ मिनट तक ही इसे कंधा दे पाया। मुझे शीघ्र कंधा बदलना पड़ा। अर्थी बहुत भारी थी, यह तो हरविलास जी आदि तत्कालीन अनेक महानुभावों के लेखों से प्रमाणित होता है।

चाँदापुर का शास्त्रार्थ और पादरी मौलवी :- चाँदापुर के शास्त्रार्थ पर बहुतों ने बहुत कुछ लिखा है परन्तु इस शास्त्रार्थ के कुछ पहलुओं के ऐतिहासिक महत्त्व को ही हमारे अधिकांश सम्पादक लेखक (High-light) विशेष प्रकाश में ला सके। पूज्य पं० चमूपति जी और हमारे पुराने शास्त्रार्थ महारथी अवश्य कुछ अपवाद हैं। इस ग्रन्थ में हमने इसके प्रत्येक पक्ष को उजागर किया है।

राधा स्वामी मत के गुरूजी का कथन :- राधा स्वामी मत के तीसरे गुरु श्री हजूर जी महाराज पहले ऐसे लेखक हैं, जिन्होंने इसके ऐतिहासिक महत्त्व को बहुत सुन्दर शब्दों में इतिहास प्रेमियों के सामने रखा है। आपने लिखा है कि चाँदापुर क्षेत्र मे कबीरपंथियों का बाहुल्य था। यहाँ मेले में सन् १८७६ में कबीरपंथी

www.thearyasamaj.org

पादरियों व मौलवियों से जब पिट गये तो दोनों उन्हें ईसाई व मुसलमान बनाना चाहते थे। तब उन्होंने मुंशी इन्द्रमणि जी व ऋषि जी को रक्षा के लिये पुकारा।

वह यह भी लिखते हैं कि हिन्दुओं में धर्म शिक्षा तो दी नहीं जाती। पहली बार महर्षि ने शास्त्रार्थ में अपने प्रबल तर्कों से विधर्मियों को उखाड़ कर रख दिया। मेला पाँच दिन होना था। **पादरी व मौलवी तो दूसरे दिन ही मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए।** ऋषि को सूचना तक नहीं दी गई। इतिहास ने पहली बार आर्य जाति के एक गुणी, मुनि, विद्वान् ऋषि के सामने **परकीय मतों को पीठ दिखा कर भागते** देखा। यह नवयुग की करवट थी। ऐसा राधा स्वामी गुरु जी लिखते हैं।

कच्छ भुज के राजा का निधन :- उन्नीसवीं शताब्दी के देश भर के सब विचारकों, सुधारकों और नवजागरण के दूतों पूतों के जीवन चरित पढ़ जाइये, आपको गोरे शासकों की कूट नीति का शिकार बनती असहाय भारतीय प्रजा की पीड़ा पर किसी के अश्रुकण नहीं मिलेंगे। सन् १८८१ के आरम्भिक दिनों में भुज कुच्छ के महाराजा परागमल चल बसे। उनका उत्तराधिकारी खेंगार मात्र १३-१४ वर्ष का था। महर्षि ने एक आर्य के हाथ महादेव गोविन्द रानाडे और श्री गोपालहरि देशमुख के नाम एक विशेष पत्र भेजा। इनका सरकार के घर में मान-सम्मान था। इनको ऋषि जी ने कहा कि भुज कच्छ पर विशेष कृपा दृष्टि कीजिये। महाराजा अवयस्क हैं। महर्षि को भोली-भाली गुजराती प्रजा के अनिष्ट की चिन्ता थी।

मित्रो! कहिये क्या कभी हम इस ऐतिहासिक पत्र, ऋषि जीवन की इस घटना का मूल्याङ्कन कर पाये। टंकारा यात्रा तो लाखों को करवा दी होगी परन्तु गुजरात के चार पाँच सहस्र ग्रामों तक महर्षि की यह अन्तर्वेदना-निर्मोही संन्यासी के हृदय में गुजरात की मूक प्रजा की पीड़ा न पहुँचा सके। यह पत्र, यह घटना हमने इस ग्रन्थ का सम्पादन करते हुए इस में जोड़ दी है।

पौराणिकों का ऋषि विरोधी जनून :- देश भर के कालेजों में और फिर विश्वविद्यालयों में गोरे-गोरे ईसाई लेखकों व गो मांस प्रचारक राजेन्द्र लाल मित्र के वेदभाष्य व ग्रन्थ संस्कृत के विद्यार्थियों को पढ़ने ही पड़ते थे। कभी भी किसी सनातनी पण्डित ने मैक्समूलर आदि के ग्रन्थों को पढ़ाने का विरोध नहीं किया। परन्तु महर्षि के वेदभाष्य को महाविद्यालयों में न पढ़ाया जाय-यह आन्दोलन एक ब्राह्मण ने छेड़ा। थियोसाफिस्ट में उसका पत्र छपा। देशघाती, धर्मघाती और वेदद्रोही इन लोगों के इस कुकृत्य को हम इतिहास के पृष्ठों में न ला सके। यह दुर्भाग्य की बात है।

जोधपुर से एक भी न आया :- जोधपुर का राज परिवार आज पर्यन्त अपने भक्तों द्वारा महर्षि को जोधपुर में विष दिये जाने को झुठलाने तथा आर्यसमाज के इतिहास को विकृत करने के सब पापड़ बेल चुका है और राजपरिवार के सेवक अब भी अपनी निब घिसाने में लगे हैं।

इस जीवन चरित्र में आप तत्कालीन पत्रों में छपे महर्षि के दाहकर्म संस्कार के समाचार बहुत विस्तार से पढ़ेंगे। देश के अनेक नगरों से आर्य लोग अजमेर पहुँचे। छलेसर के समीप के अहक ग्राम के ठाकुर भोपालसिंह जी तो थे ही ऋषि की सेवा में। न जाने कहाँ-कहाँ से भटकते वह आबू और अजमेर पहुँचे। महाराणा सज्जन सिंह जी का व्यक्ति सन्देश लाया कि यदि ऋषि का शरीर छूट जाये (आशङ्का तो थी ही) तो तत्काल दाहकर्म न किया जावे। महाराणा के आगमन तक संस्कार रोका जावे परन्तु ऐसा न किया जा सका।

www.thearyasamaj.org

पाठकवृन्द! राजपरिवार गवेषकों स्कालरों से पूछिये तो जोधपुर से तब अन्तिम संस्कार में कौन पहुँचा? इस प्रश्न को तो ये लोग छूते ही नहीं। भावनाशून्य ऐसे व्यक्ति तो अपनी बुद्धि व मस्तिष्क का व्यापार करते हैं।

इसी के साथ जुड़ी दूसरी घटना पर भी विचार किया जावे। दयानन्द आश्रम का शिलान्यास किया गया। ऋषि की भस्मी को भी दबाया गया। उस उत्सव में मेरठ वालों के उद्योग से उ0प्र0 के आर्यों ने भी अपना उत्सव परोपकारिणी सभा के समारोह के साथ ही जोड़ दिया। देश के दूरस्थ नगरों व कस्बों से आर्य भाई तब अजमेर पधारे थे। मुनिवर गुरुदत्त जी और वीर शिरोमणि पं० लेखराम जी को सुनकर अजमेर निवासी धन्य-धन्य हो रहे थे। राजस्थान के दूरस्थ क्षेत्रों से आर्य भाई आए। उदयपुर, शाहपुरा के नरेशों का आना तो न हो सका परन्तु उनका प्रतिनिधित्व करने उनके विशेष व्यक्ति पधारे। मसूदा के राय साहब ने तो एक समय का सारा भोजन व्यय दिया। महाराणा सज्जन सिंह जी ने उत्सव का शेष सारा व्यय भी दिया। शाहपुरा का भी अद्वितीय योगदान था परन्तु, जोधपुर से प्रतापसिंह या किसी अन्य ने तो क्या आना था- वहाँ से तो कोई चिड़िया भी अजमेर तक न फटकी। यह उस समय के पत्रों में विस्तृत वृतान्त छपा मिलता है। हम जितनी सामग्री दे सकते हैं, दे रहे हैं। आर्यवृन्द! इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिये इतना परिश्रम केवल इसी प्रयोजन से किया गया है कि आर्यसमाज के इतिहास को प्रदूषित होने से बचाया जा सके।

दक्षिण भारत का पहला आर्य समाज :- एक शताब्दी से अधिक समय तक यही प्रचारित रहा कि दक्षिण भारत का पहला आर्यसमाज 'किल्ला धारुर' हैदराबाद स्टेट (अब महाराष्ट्र) में स्थापित हुआ। सात खण्डों में छपे आर्य समाज के इतिहास में भी यही कहा गया। हमने कुछ वर्ष पूर्व आर्य प्रतिनिधि सभा कर्नाटक को यह विशेष खोज करके दी कि महर्षि के जीवन काल में ही मैंगलूर (कर्नाटक) में आर्यसमाज की स्थापना हो चुकी थी। सन् १९८३ में परोपकारी में हमने ऋषि के बलिदान के समय तक के आर्यसमाजों की एक सूची छपवाई थी। उसमें भी मैंगलूर का नाम दिया था।

अब इस ऋषि जीवन में यह महत्वपूर्ण खोज करके दी है कि कर्नाटक का एक प्रकाण्ड विद्वान् (आर्यसमाजी नहीं था) श्री कृष्ण शास्त्री दक्षिण का पहला व्यक्ति था जिसने पूना में महर्षि के कई व्याख्यान सुने थे और वह ऋषि के बहुत प्रशंसक थे। आर्यसमाज विरोधी भी नहीं थे।

सन् १८७५ में महर्षि मुम्बई पधारे। सन् १८७५ में ही वहाँ आर्यसमाज की स्थापना की गई थी। ऋषिवर १६ अक्टूबर १८७५ को तीसरी बार मुम्बई महानगरी आये और तीन मास से भी कुछ अधिक समय तक रहकर वैदिक धर्म प्रचार की धूम मचा दी। उन्हीं दिनों इंग्लैण्ड के प्रिंस ऑफ वेल्ज भारत यात्रा पर आये। आप आठ नवम्बर, १८७५ को जलपोत से मुम्बई के तट पर उतरे और पाँच दिन यहाँ रहकर महाराष्ट्र के पूना, कोल्हापुर आदि नगरों की यात्रा पर चले गये।

उन्हीं दिनों कर्नाटक के मैंगलूर नगर के समीप का एक प्रभावशाली सम्पन्न भूपति अपने कुछ युवा मित्रों के संग मुम्बई आया हुआ था। यहाँ स्वामी जी महाराज के व्याख्यानों की धूम सुनकर इस युवक के मन में ऋषि को सुनने की इच्छा जागी। आपने श्री महाराज का व्याख्यान तो सुना ही, ऋषि से वार्त्तालाप भी किया। कुछ साहित्य भी क्रय किया। वेदभाष्य की सदस्यता भी

www.thearyasamaj.org

ग्रहण की। घर लौटकर मैंगलूर में आर्य समाज के प्रचार में जुट गया। आर्यसमाज स्थापित हो गया। साठ व्यक्ति आर्यसमाज के सदस्य बन गये, जिनमें कई प्रतिष्ठित राज्य अधिकारी भी थे।

आगे चलकर प्रसिद्ध विद्वान् पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड ने मैंगलूर को अपना केन्द्र बनाकर लम्बे समय तक दक्षिण भारत में वैदिक धर्म का प्रचार कार्य किया। हमें इस घटना की जानकारी सन् १८८६ के चैत्र मास के उर्दू मासिक 'आर्य समाचार' के अंक से मिली। आर्यसमाज के स्थापना काल में ऐसे बहुत थोड़े समाज थे, जिनकी स्थापना करते समय साठ जन उनके सभासद बन गये। इस दृष्टि से यह घटना असाधारण है। परोपकारी पाक्षिक में हमने 'तड़प झड़प' में इस पर प्रकाश डाला परन्तु इसको पढ़कर भी कर्नाटक के किसी आर्य पुरुष ने आर्य समाज के उस संस्थापक आर्यवीर के शुद्ध नाम आदि की जानकारी उपलब्ध न करवाई। ग्रन्थ का दूसरा भाग छपने से पूर्व ही ईश्वर की कृपा से हमारा पुरुषार्थ फलीभूत हुआ। हमें 'भारत सुदशा प्रवर्त्तक' मासिक के पृष्ठ उलटते-पलटते सब जानकारी मिल गई। इतिहास के इस स्वर्णिम पृष्ठ का अनावरण करते हुए हमारा मन गद्‌गद हो रहा है। 'आर्यसमाचार' में फारसी लिपि में नाम आदि ठीक नहीं पढ़े जा सके। भारत सुदशा प्रवर्त्तक के अक्टूबर १८६२ के अंक में इस आर्य पुरुष के निधन का विस्तृत समाचार छपा मिलता है। सोलह अगस्त १८६२ को इनकी मृत्यु हुई। उस दिन प्रातः सात बजे स्नान किया। नित्य कर्म सब किये। रात्रि दस बजे शरीर का परित्याग किया। इनका नाम रङ्गपामीश शर्मा था। आप मंजेश्वर ग्राम के भूपति थे। समाज का मन्दिर व पुस्तकालय आदि स्थापित करवाया। प्रचार करते हुए धूम मचा दी। इनके कनिष्ट भ्राता का नाम शिवराम शर्मा, भतीजा रामकृष्ण शर्मा भागिनेय गणपतिराम शर्मा था। यह बताना रुचिकर होगा कि 'आर्य समाचार' से तो संन् १८७५ में महर्षि से इनकी भेंट की जानकारी मिली। सन् १८७५ में ऋषि दो बार मुम्बई पधारे। इन्होंने कब दर्शन किये? यह समस्या खड़ी हुई। उसी समाचार में यह संकेत था कि प्रिंस आफ वेल्ज़ के आगमन के समय आप वहाँ गये थे। प्रिंस के आने की निश्चित तिथियों की श्रीयुत राहुल जी अकोला ने पूरी खोज करके हमें कृतार्थ किया।

<u>राजस्थान का प्रथम आर्य शास्त्रार्थ महारथी :-</u> महर्षि सन् १८८१ में मसूदा पधारे। वह एक अविस्मरणीय यात्रा रही। तब वहाँ श्री सिद्धकरण जैनी से ऋषि का शास्त्रार्थ हुआ था। उस समय एक और भी शास्त्रार्थ वहाँ पर हुआ परन्तु यह ऋषि जी से नहीं हुआ था। यह शास्त्रार्थ महर्षि के प्रेमी बयावर निवासी पादरी बाबू बिहारीलाल से हुआ था। यह पादरी पहले हिन्दू था। इसे शास्त्रार्थ करने की चुनौती मसूदा के राव बहादुरसिंह जी ने दी थी। मसूदा के राजा बड़े धर्मनिष्ठ स्वाध्यायशील ऋषि भक्त थे। महर्षि की देखरेख में राव बहादुर सिंह जी ने यह शास्त्रार्थ किया।

इस दृष्टि से देखा जावे तो राव बहादुर सिंह जी आर्यसमाज के प्रथम राजस्थानी शास्त्रार्थ महारथी थे। यह तथ्य हम इतिहास प्रेमियों के सामने न रख सके। आर्यसमाज ने राजपूतों में बड़े बड़े दिग्गज विद्वान् पैदा किये। आचार्यप्रवर उदयवीर शास्त्री जी से लेकर पं० शिवकुमार जी शास्त्री, अमर स्वामी जी कुँवर सुखलाल जी तक एक लम्बी सूची है परन्तु राजपूत वर्ग से प्रथम शास्त्रार्थ महारथी तो ऋषि जी के जीवनकाल में राव बहादुर सिंह जी मसूदा निकले। यह एक साधारण घटना नहीं, एक धार्मिक व सामाजिक क्रान्ति भी थी। ❑❑

www.thearyasamaj.org

हमने क्या खोजा- भारत या इण्डिया? (५)

(राजेशार्य आट्टा साढौरा)

प्रिय पाठकवृन्द! भाईचारे का संदेश देने वाले इस्लाम ने पैदा होते (६२० ई०) ही संसार की शांति भंग करनी शुरू कर दी। अपनी क्रूरता और असहनशीलता से शीघ्र ही बहुत से देशों को अपने अधीन कर लिया। भारत (सिन्ध) पर भी आक्रमण शुरू (६३६ ई०) कर दिये। लगभग ७५ वर्ष बाद ७१२ ई० में मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में वे सिन्ध को जीतने में सफल हो गये। इधर हिन्दू अफगानिस्तान को जीतने के लिए अरबों ने ६५० ई० से आक्रमण शुरू किये और ८७० ई० में उन्हें सफलता मिली। पर वे सिन्ध और मुल्तान से आगे नहीं बढ़ पाये। बाद में तुर्कों ने १०२६ ई० में महमूद गजनवी के नेतृत्व में पंजाब पर अधिकार किया और मुहम्मद गौरी की विजय (११९२ ई०) के साथ इस्लाम ने राजनैतिक ताकत के रूप में भारत में प्रवेश किया।

इस्लाम के भारत में प्रवेश के विषय में 'भारत की खोज' में लिखा है- "(सिन्ध को जीतने के बाद) भारत और अरब के बीच संपर्क बढ़ने लगा।.... इस लगातार संपर्क के कारण भारतीयों को अनिवार्य रूप से इस नए धर्म इस्लाम की जानकारी हो गई। इस नए धर्म को फैलाने के लिए प्रचारक भी आए और उनका स्वागत हुआ। मस्जिदें बनीं। न शासन ने इसका विरोध किया न जनता ने। न कोई धार्मिक झगड़े हुए।.... अतः राजनीतिक ताकत के रूप में आने से कई शताब्दी पहले इस्लाम भारत में एक धर्म के रूप में आ गया था।"

समीक्षा- इतिहास तो यही बताता है कि इस्लाम ने भारत में आक्रामक के रूप में ही प्रवेश किया था। सिन्ध को जीतने (७१२ ई०) के बाद उसकी राजधानी आरोर को जाते समय मुहम्मद बिन कासिम ने हजारों पुरुषों की इसलिए निर्दयापूर्वक हत्या करवा दी क्योंकि उन्होंने अपने पूर्वजों के धर्म को त्यागने से मना किया। हजारों निर्दोष स्त्रियों और बच्चों को उनकी सम्पत्ति और धर्म से वंचित किया तथा उन्हें दासता की बेड़ियों में जकड़ा गया। हर जगह मन्दिर नष्ट किये गये; मूर्तियाँ तोड़ी गयीं और हिन्दुओं पर जजिया कर लगा दिया गया। इस प्रकार इतिहासकार तो इस्लाम के असहिष्णु और भयानक रूप का वर्णन करते हैं, पर लेखक कहता है कि इसने बड़ी शान्ति से भारत में प्रवेश किया और इसके प्रचारक भी आये। क्या वही प्रचारक थे- जिनके एक हाथ में कुरान और दूसरे में तलवार होती थी अर्थात् दोनों (इस्लाम या मौत) में से एक को स्वीकार करवाने वाले? दूसरी तरह के प्रचारक भी इतिहासकारों ने लिखे हैं, जो फकीर (सूफी) के वेश में गुप्तचरी करके गौरी आदि को सूचनाएँ भेजते थे और इस्लाम के लिए भूमिका तैयार करने के लिए त्याग का लिबास पहने हुए थे। इससे कुछ मूर्ख अवश्य उनके पंजे में फँस गए होंगे, पर सत्य तो यही है कि इस्लाम का प्रचार तलवार के जोर पर ही हुआ था।

२८. (i) "उस (महमूद गजनवी) ने बड़ी निर्ममता से (भारत पर) कई आक्रमण किये जिनमें बहुत खून खराबा हुआ। हर बार महमूद अपने साथ बहुत बड़ा खज़ाना ले गया। हिंदू धूलकणों की तरह चारों तरफ बिखर गए और उनकी याद भर लोगों के मुँह में पुराने किस्सों की तरह बाकी रह गई। जो तितर-बितर होकर बचे रहे, उनके मन में सभी मुसलमानों के प्रति गहरी नफ़रत पैदा हो गई।"

समीक्षा- क्या वास्तव में ही हिन्दू धूलकणों की तरह बिखर कर नष्ट हो गये थे? क्या महमूद के आक्रमणों के बाद हिन्दू केवल किस्सों में ही रह गये थे? तो इतने विशाल भारत में और कौन बच गये थे? और हिन्दुओं के किस्से कहने-सुनने वाला भारत में कौन रहा था? फिर हिन्दू आज तक भी जिन्दा कैसे हैं? क्या लेखक को वास्तविकता का पता नहीं है कि हर मुख्य हमले

www.thearyasamaj.org

में महमूद गजनवी को भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। उच्च पर आक्रमण (१००७ ई०) के समय उसके हाथ कुछ नहीं लगा, उसकी सेना बुरी तरह सताई गई और उसकी 'कीमती जान' बड़ी मुश्किल से बची थी। जाट व राजपूत वीरों ने उसकी लूट का बोझ हर बार हल्का किया था। कश्मीर में उसे मुँह की खानी पड़ी थी। स्वयं लेखक ने भी लिखा है कि काठियावाड़ में सोमनाथ से लौटते हुए राजस्थान के रेगिस्तानी इलाकों में भी उसे भारी हार खानी पड़ी। इस आखिरी धावे के बाद वह फिर नहीं लौटा।" सब कुछ जानते हुए भी लेखक ने उपन्यास की शैली में क्यों लिख दिया कि हिन्दू धूलकणों की तरह चारों तरफ बिखर गये और . ...?

किसी भी मत मजहब के प्रति दूसरे लोगों की अच्छी व बुरी धारणा उसके सिद्धान्तों की अपेक्षा उसे मानने वाले व्यक्तियों के व्यवहार के कारण ही बनती है। जब इस्लाम के प्रतिनिधियों ने भारतवासियों के साथ क्रूरता का व्यवहार किया, तो इस देश के लोगों के मन में इस्लाम के प्रति नफ़रत नहीं, तो क्या प्रेम पैदा होगा? केवल महमूद गजनवी ही क्यों, गौरी, बलबन, अलाउद्दीन, मुहम्मद तुगलक, तैमूर, बाबर, औरंगजेब, नादिरशाह आदि सभी के व्यवहार ने नफ़रत ही तो पैदा की। तभी तो कवि को कहना पड़ा-

खुदा के बन्दों को देखकर ही,
खुदा से मुन्किर हुई है दुनिया।
कि ऐसे बन्दे हैं जिस खुदा के,
वो कोई अच्छा खुदा नहीं है।।

२८ (ii) "दिल्ली की तबाही के बाद उत्तरी भारत कमजोर पड़कर टुकड़ों में बँट गया। दक्षिण भारत की स्थिति बेहतर थी और वहाँ के राज्यों में सबसे बड़ी और शक्तिशाली रियासत विजयनगर थी। इस रियासत और नगर ने उत्तर के बहुत से हिंदू शरणार्थियों को आकर्षित किया। उपलब्ध वृत्तांतों से पता चलता है कि शहर बहुत समृद्ध और सुंदर था।"

समीक्षा- यह वही विजय नगर था, जिसकी समृद्धि और सुन्दरता के बराबर धरती पर कोई नगर नहीं था। कृष्णदेव राय के काल (१५०६-२६ ई०) में यह हिन्दू स्वाभिमान का प्रतीक बन गया था। फिर उसका क्या हुआ, लेखक ने वर्णन नहीं किया? इतिहासकार बताते हैं कि अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुण्डा तथा बीदर के मुस्लिम शासकों ने मिलकर उसके विरूद्ध जिहाद छेड़ दिया। २३ जनवरी १५६५ को तलीकोट के स्थान पर भयंकर संग्राम छिड़ गया। आरम्भ में विजयनगर की सेना का पलड़ा भारी रहा, परन्तु अन्त में रामराय (प्रधानमंत्री) के दो मुस्लिम सेनापतियों के विश्वासघात के कारण उसकी पराजय हुई। रामराय का सिर काटकर बरछे पर लटका दिया। इसके बाद भागते हुए सैनिकों का पीछा कर लगभग एक लाख सैनिकों को मार दिया। विजयनगर पहुँचने पर मुस्लिम सैनिकों ने वहाँ खूब लूटमार की और लोगों पर बहुत अत्याचार किये। बड़े-बड़े मन्दिर, उद्यान, सुन्दर महल, पुस्तकालय आदि क्रूरता से नष्ट कर दिये गये। अर्थात् जहाँ कुछ दिन पूर्व समृद्धि का साम्राज्य था, वहाँ विनाश का ताण्डव होने लगा।

लेखक ने भारत को (जो मूल से वैदिक संस्कृति का देश है) मिश्रित संस्कृति देश सिद्ध करने के लिए लिखा है-

"भारत पर मुस्लिम आक्रमण का या भारत में मुस्लिम युग की बात करना गलत और भ्रामक है। इस्लाम ने भारत पर आक्रमण नहीं किया, वह भारत में कुछ सदियों के बाद आया। आक्रमण तुर्कों (महमूद) ने किया था, अफगानों ने किया था और उसके बाद तुर्क या मुगल आक्रमण हुआ।.... मुगल भारत के लिए बाहर के और अजनबी लोग थे, फिर भी वे भारतीय ढाँचे में बड़ी तेजी से समा गए ओर उन्होंने हिंद-मुगल युग की शुरूआत की।"

समीक्षा- बात तो ठीक है, वर्तमान मुसलमानों को तो कोई आक्रमणकारी नहीं कहता (इनके तो पूर्वज भी हिन्दू ही थे), फिर इनकी नाराजगी को ध्यान में रखते हुए उन आक्रमणकारियों के जुल्मों को क्यों छिपाया जाता है? जब कुछेक कबीलों (आक्रमणकारियों) को

www.thearyasamaj.org

छोड़कर समस्त मुस्लिम जाति को निर्दोष मानते हो, तो आर्यों को क्यों बार-बार आक्रमणकारी लिखा जाता है?

भारत मुहम्मद बिन कासिम से लेकर अहमदशाह अब्दाली तक मुस्लिम आक्रमण झेलता रहा है। जबकि लेखक कहता है कि आक्रमण इस्लाम ने नहीं किये, वह तो भारत में कुछ सदियों के बाद आया। कब? पहले लिखा है कि राजनीतिक ताकत के रूप में आने से कई शताब्दी पहले इस्लाम भारत में एक धर्म के रूप मे आ गया था। फिर किसे सत्य माना जाये?

भारत आज भी आतंकवाद का दंश झेल रहा है और जितने आतंकवादी पकड़े जाते हैं, लगभग सभी मुस्लिम हैं। हमारे नेता मस्लिमों की नाराजगी को ध्यान में रखते हुए लेखक की ही भाषा का प्रयोग कर रहे हैं कि आतंकवादी का कोई धर्म नहीं होता। हम भी मानते हैं, पर आतंकवादी को मुस्लिम समुदाय की सहानुभूति क्यों मिलती है? भारत का मुस्लिम समुदाय अपने मजहब को कलंक से बचाने के लिए आतंकवादियों के विरूद्ध क्यों नहीं बोलता? क्यों संसद पर हमले के दोषी आतंकवादी को फाँसी देने में ग्यारह साल लग गये (वह भी चुपचाप)? क्यों कश्मीर में कर्फ्यू लगाना पड़ा? कर्फ्यू समाप्त होते ही पुलिस पर हमला करने वाले किस मजहब के थे? फिर कैसे कहते हैं कि आक्रमणकारी या आतंकवादी का कोई मजहब नहीं होता?

किसी भी मुस्लिम आक्रमणकारी या शासक ने भारत (हिन्दू) की किसी भी परम्परा को नहीं अपनाया। बहादुरशाह जफर तक उनके नाम भी अरबी भाषा के हैं। दूसरी बातें तो बहुत दूर हैं। अकबर आदि ने अवश्य हिंदू औरतों से विवाह किये, पर उनकी सन्तानें हिंदू नहीं बनीं और वे औरतें भी मरने के बाद मुस्लिम परम्परा के अनुसार कब्र में दफनाई गई थीं। उदार कहा जाने वाला सम्राट अकबर जीवन भर हिन्दू स्वाभिमान के प्रतीक मेवाड़ को मिटाने में लगा रहा। उसके बेटे सलीम (जहाँगीर) ने हिन्दू माँ (मानसिंह की बुआ) हीरकंवर (मरियम उज्जमानी) का बेटा होकर भी मेवाड़ को नष्ट किया। गुरु अर्जुन देव का सिर कटवाया। शाहजहाँ ने हिन्दू माँ (जोधपुर के मोटा राजा उदयसिंह की पुत्री) मानमती (जोधाबाई) का पुत्र होकर भी हिन्दू मन्दिरों को तोड़ा और उसके बेटे औरंगजेब ने तो सारी ही हदें पार कर दी थीं। दूसरे अत्याचारों के अतिरिक्त हिन्दुओं पर जजिया लगाकर यह सिद्ध कर दिया था कि भारत में मिश्रित नहीं, अपितु दो संस्कृतियाँ हैं, दो मत (मजहब) हैं, जो बाद में दो देशों के रूप में प्रकट हुए। यदि वे (मुगल आदि) भारतीय ढाँचे में समा गए होते (जैसा लेखक ने लिखा है) तो अलग से अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय नहीं खुलता, मुस्लिम लीग नहीं बनती, तुर्की के खलीफा के समर्थन में भारत में खिलाफत आन्दोलन नहीं चलता और उसमें असफल होने पर मोपला विद्रोह (हजारों हिन्दुओं की हत्या और धर्मान्तरण) नहीं होता। ये सब और दूसरे दंगे भी लेखक की आँखों के सामने 'भारत की खोज' लिखने से पहले हो चुके थे।

३०. "अफगान शासक और जो लोग उनके साथ आए थे, वे भी भारत में समा गए। उनके परिवारों का पूरी तरह भारतीयकरण हो गया। भारत को वे अपना घर और बाकी सारी दुनिया को विदेश मानने लगे।.. .. पर कुछ ऐसे राजपूत सरदार थे, जिन्होंने उनकी अधीनता अस्वीकार कर दी और भयंकर झगड़े हुए। दिल्ली के प्रसिद्ध सुल्तान फिरोजशाह की माँ हिंदू थी। यही स्थिति गयासुद्दीन तुगलक की थी।"

समीक्षा- इसे पढ़कर मुझे गालिब की पंक्तियाँ याद आती हैं :-

हमको मालूम है जन्नत की हकीकत लेकिन,
दिल के बहलाने को गालिब यह ख्याल अच्छा है।

भारत में समा जाना तो शक-कुषाण आदि की तरह होता है, जिनका पता भी नहीं चलता कि वे भारत में रह रहे हैं। कनिष्क ने भारत में पैदा हुआ बौद्ध मत स्वीकार कर उसका वर्धन किया। उसके वंशजों के नाम व काम बदल गये। कुषाण वंश का अन्तिम शासक वासुदेव शिव का उपासक था। उसकी मुद्राओं पर नन्दी बैल का चित्र अंकित मिलता है।

www.thearyasamaj.org

वैसे आदमी जहाँ पैदा होता है, जहाँ जीता है वही उसका घर होता है और उसे मानना भी चाहिए। उसकी समृद्धि का प्रयास भी करना चाहिए। यदि अफ़गान शासकों ने ऐसा किया, तो कोई आश्चर्य नहीं, पर दुर्भाग्य से कुछेक उदाहरणों को छोड़कर वे इस देश के साथ नहीं जुड़ पाये और जो जुड़े, उन्हें भी हिन्दुओं की तरह काफिर कहकर नष्ट कर दिया गया।

स्वाभिमानी राजपूतों ने ठीक ही उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की और संसार के सामने स्वतंत्रता की रक्षा का उदाहरण प्रस्तुत किया, पर अफगान यहाँ राजा बनकर रहने की ही हठ क्यों करते थे? फिरोजशाह और गयासुद्दीन की माँ हिन्दू होने से यह सिद्ध नहीं हो जाता कि वे भारतीयों (हिन्दुओं) में घुल मिल गये थे। ठीक है कि इनकी माँ हिन्दू थी, पर क्या वे बाद में भी हिन्दू रह पाईं? क्या उनकी सन्तान ने हिन्दू धर्म अपनाया? गयासुद्दीन तुगलक दिल्ली का पहला सुल्तान था, जिसने अपने नाम के साथ 'गाजी' (काफिरों का वध करने वाला) शब्द जोड़ा। उसने नियम जारी किया कि हिन्दुओं को धन एकत्र करने की आज्ञा नहीं होनी चाहिए। इसीलिए उनके पास अपने परिश्रम की कमाई में से केवल उतना ही छोड़ा जाता था, जिससे वे मात्र जीवन-यापन भी सुखपूर्वक न कर सकें। उसने हिन्दू मन्दिरों और मूर्तियों को नष्ट किया।

फिरोजशाह की माँ का विवाह गयासुद्दीन तुगलक के छोटे भाई रज्जब के साथ बलपूर्वक हुआ था। इसके लिए दिपालपुर के सूबेदार के रूप में तुगलक ने भट्टी राजपूत रनमल और उसकी प्रजा को घोर संकट में डाल दिया। अपनी प्रजा को बचाने के लिए लड़की ने यह विवाह स्वीकार किया था। इस विवाह से पैदा हुआ था फिरोजशाह, जो इस्लाम का पोषण तथा हिन्दू धर्म का दमन और मूर्ति पूजा का नाश करना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझता था। वह अपनी आत्मकथा में लिखता है कि मैंने अपनी प्रजा को इस्लाम अंगीकार करने के लिए अनेक प्रकार से प्रोत्साहन दिया। उसने मन्दिरों को और उनकी मूर्तियों को तोड़ा। उसने मुसलमानों के बीच धर्म-प्रचार करते हुए एक ब्राह्मण को जीवित जला दिया था। ऐसे व्यक्तियों को भी भारत में समाया हुआ देखने वाली पावन दृष्टि (?) लेखक को किस देश से मिली थी?

३१. "इस्लाम के एकेश्वरवाद ने हिंदू धर्म को प्रभावित किया और हिन्दुओं के अस्पष्ट बहुदेववाद का प्रभाव भारतीय मुसलमानों पर पड़ा। इनमें से अधिकतर भारतीय मुसलमान ऐसे थे, जिन्होंने धर्म परिवर्तन किया था और उनका पालन-पोषण प्राचीन परंपराओं में हुआ था....।"

समीक्षा- यह सत्य है कि मुस्लिम काल में इस देश में बहुदेवतावाद चल रहा था, पर एकेश्वरवाद तो वैदिक अवधारणा है, जिसको छोड़कर (भूलकर) वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) बहुदेवता वाली पौराणिकता की ओर गया था। वेद-उपनिषद् एकेश्वर का ही वर्णन करते हैं-

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा ....। (कठ. ५-१२)
तदेवाग्निस्तदादित्यः तद्वायु.....। (यजु. ३२-१)
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं ......। (ऋ. १-१६४-४६)
स एषः पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्। (योग०)

यदि हिन्दू एकेश्वरवाद से प्रभावित होता, तो पुनः वेद, दर्शन, उपनिषद आदि की शरण ले लेता, पर अब तो वह एक ही परमात्मा के विभिन्न अवतारों की कल्पना से मोहित हो रहा था। इस्लाम का एकेश्वरवाद उसे कैसे प्रभावित कर सकता था? वास्तव में उसे इस्लाम की तरफ आकर्षित किया था, इस्लाम की क्रूरता ने, जजिया आदि करों से मुक्ति ने तथा जीवन की कुछ सुविधाओं ने व चार-चार बीवियों के लालच ने।

हाँ, हिन्दू धर्म की बहुत सी अच्छाइयों ने विदेशी मुस्लिमों पर बड़ा प्रभाव डाला, तभी तो दाराशिकोह उपनिषदों के पीछे पागल हो गया। रहीम-रसखान राम-कृष्ण की भक्ति में डूबकर गाने लगे-

चित्रकूट में रमि रहे, रहिमन अवध नरेश।
जापै विपता परत है, सो आवत यहि देश।।
तैं रहीम मन आपुनों, कीन्हों चारु चकोर।
निसि बासर लागो रहै, कृष्ण चंद्र की ओर।।
मानुष हौं तो वहीं रसखानि बसौं

www.thearyasamaj.org

ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरे चरौं
नित नन्द की धेनु मंझारन।।

यहाँ कोई राजा उन्हें हिन्दू धर्म की तरफ आकर्षित करने के लिए पुरस्कार या दण्ड नहीं दे रहा था, अपितु उन्होंने स्वयं निर्धनता का वरण किया था और उसी में मस्ती मनाते हुए रहीम ने कहा था-

ए रहीम दर दर फिरहिं, मांगि मधुकरी खाहिं।
यारो यारी छोड़िये, वे रहीम अब नाहिं।।

जबकि लेखक ने लिखा है कि हिन्दुओं के बहुदेवतावाद से प्रभावित होने वाले अधिकतर भारतीय मुसलमान ही थे जो हिन्दू से धर्म परिवर्तन करके मुस्लिम बने थे। यदि वास्तव में ऐसा ही था, तो लेखक ने यह क्यों लिखा कि मुगल अफगान आदि बड़ी तेजी से भारतीय ढाँचे में समा गए? और भारतीय मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन कर लिया था या उनका धर्म परिवर्तन कर दिया गया था? वे तो वैसे भी भारतीय (हिन्दू) परिवेश में पले थे, उनके लिए बहुदेवतावाद कोई नई चीज नहीं था। आश्चर्य तो अपनी असहनशीलता के लिए प्रसिद्ध शासक जाति का शासित जाति की मान्यताओं से प्रभावित होने में है।

इसे भारतीय संस्कृति की विजय कहना चाहिए कि अंग्रेजी शासन में मुस्लिम शासकों का दबाव न रहने पर भारतीय मुस्लिमों की कई जातियों (खोजा, मलकाने) ने पुनः हिन्दू धर्म में आना चाहा। परन्तु धर्म के ठेकेदारों ने तो पहले ही उनके लिए दरवाजे बन्द कर लिये थे, और दुर्भाग्य से कांगेस ने भी आँखे मूंद लीं। स्वामी श्रद्धानन्द ने शुद्धि आन्दोलन चलाया तो कांगेस (विशेषकर गांधीजी) ने मुस्लिम कट्टरवाद को प्रसन्न करने के लिए शुद्धि आन्दोलन का विरोध किया। जिसके परिणामस्वरूप २३ दिसम्बर १९२६ को स्वामी जी की हत्या कर दी गई। कांगेस की अदूरदर्शिता से देश बँट गया और बँटकर भी उन्हीं समस्याओं से जूझ रहा है। क्योंकि इनका समाधान तुष्टीकरण नहीं, अपितु स्वार्थ की राजनीति त्यागकर राष्ट्रहित को प्राथमिकता देने से होगा। चाहे गोहत्या हो, मन्दिर-मस्जिद का मामला हो, कश्मीर-समस्या हो या आतंकवाद हो, ये समस्याएँ तभी समाप्त होंगी, जिस दिन मुस्लिम चाहेंगे और इस्लाम को बदनामी से बचाने के लिए इनके विरोध में खड़े होंगे। यह तब होगा, जब ये अपने आदर्श गजनवी, गोरी या बाबर को न मानकर जन्मभूमि के लिए जीने व मरने वाले महाराणा प्रताप, शिवाजी, इब्राहीम गार्दी, अशफाक उल्ला खाँ, अब्दुल गफ्फार खाँ, अब्दुल हमीद, डॉ० अब्दुल कलाम आदि को मानेंगे।

मेरे मुस्लिम बन्धुओ! हमने स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी, पर क्या स्वतंत्रता की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य नहीं है? भारत ने तो बंटवारा सहकर भी कई बार देश का सर्वेच्च पद आपको सौंपा है, फिर भेदभाव का आरोप कयों? यह शस्यश्यामला माँ वसुन्धरा बिना भेदभाव के हम सबका पालन कर रही है और मरने के बाद भी अपनी गोदी में शरण देगी, फिर इसकी उन्नति से परहेज क्यों? आपके पूर्वज इसी धरती पर जन्मे थे और यहाँ की संस्कृति से जुड़े थे। वे आक्रमणकारी विदेशी नहीं थे, अपितु जबरदस्ती मुसलमान बनाये गए थे। अरबी संस्कृति तो उन्हें तत्कालीन शासन के दबाव में अपनानी पड़ी थी। उसे अब भी अपनाए रखना गुलामी को ढोना है। गजनवी, गौरी, बाबर आदि पर गर्व करना विदेशी बनना है। अल्पसंख्यक के नाम पर विशेष सुविधाएँ पाना पंगु बनना है। बहिन शान्ति नागर के शब्दों में कहूँ तो-

मत माँगो ये महल दुमहले, न ये चंदा तारे,
नफरत से जलती दुनिया पर, बौछार अमन की माँगो,
मेरे देशवासियो!
गुरुद्वारे में सिक्ख रहो तुम, शैव, शाक्त मन्दिर में।
मस्जिद में मुस्लिम, ईसाई पावन गिरजाघर में।
इनके बाहर भारतवासी, भारत देश हमारा।
भारत की रक्षा करना, पहला कर्तव्य हमारा।
बेमौसम क्यों पतझर आया, बहार चमन हित मांगो,
मेरे देशवासियो!

(क्रमशः)

www.thearyasamaj.org

हिन्दुओं की कमजोरियाँ

(कृष्ण चन्द्र गर्ग, ८३१/१०, पंचकूला, हरियाणा, फोन : ०१७२-४०१०६७९)

हिन्दुओं में कुछ कमियाँ और कमजोरियाँ हैं, जिनके कारण वे भारत में ८० प्रतिशत होते हुए भी प्रभावहीन हैं। प्रस्तुत लेख में उन कमियों पर विचार किया गया है, ताकि हिन्दू जाति उन पर चिन्तन करके अपनी कमजोरियों को दूर करके उन्नत हो तथा देश और विश्व में प्रभावशाली भूमिका निभा सके।

१. **धर्मगुरुओं के गलत उपदेश-** हिन्दुओं के धर्मगुरु उन्हें वीर, बहादुर, पराक्रमी, आत्मस्वाभिमानी, देशभक्त तथा परोपकारी बनने का उपदेश नहीं देते। वे उन्हें अपने बल, बुद्धि का प्रयोग करना भी नहीं सिखाते, वे उन्हें अन्धविश्वासी बनाकर गुरु पर आश्रित रहना सिखाते हैं। वे उन्हें शुभ कर्म करने की शिक्षा देने की बजाए अच्छे-बुरे सब प्रकार के कर्म गुरु को अर्पण करने का उपदेश देते हैं। इस प्रकार हिन्दू मानसिक और बौद्धिक रूप से कमजोर और कायर बनकर गुरु के सहारे बैठ जाते हैं और उसे दक्षिणा के रूप में धन देते रहते हैं।

२. **ईश्वर की गलत अवधारणा-** ईश्वर निराकार, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी है। वह सारी सृष्टि को बनाने वाला है। वह हमारे सब अच्छे, बुरे कार्यों को देखता ओर जानता है तथा उनके अनुसार हमें सुख और दुःख के रूप में फल देता है। ईश्वर के इस सत्य स्वरूप को न मानकर मिट्टी के खिलौनों को ईश्वर मान लेना, उनके आगे हाथ जोड़ देना, सिर झुका देना, भोजन परोस देना कोरी अज्ञानता के सिवाए और क्या है।

३. **कर्म व्यवस्था को स्वीकार न करना-** जैसा अच्छा बुरा कर्म मनुष्य करता है, वैसा ही फल उसे ईश्वर की व्यवस्था से मिलता है। ईश्वर पूर्ण न्यायकारी है, वह कोई सिफारिश नहीं मानता, रिश्वत नहीं लेता। अच्छे और बुरे कर्मों के फल भोगकर ही समाप्त होते हैं। उनसे बचने का कोई भी उपाय नहीं है। फिर भी हिन्दू जाति कोई विपत्ति आने पर उसका कारण ग्रहों-नक्षत्रों को मानती है और इधर-उधर ढोंगियों से उपाय करवाती फिरती है। ज्योतिषी के नाम से ढोंगी लोग ऐसे मानसिक रूप से कमजोर लोगों को झूठे आश्वासन देकर उनका धन लूटते हैं।

४. **धर्म की गलत अवधारणा-** मन, वचन, कर्म से सत्य का आचरण, पक्षपात रहित नय, परोपकार, सदाचार आदि ही धर्म हैं। पत्थर की मूर्ति पर दूध डालना और पेट भरे पण्डित को खिलाना, जनेऊ पहनना, तिलक लगाना, चोटी रखना आदि कर्म धर्म नहीं है। धर्म का सम्बन्ध शुद्ध आचरण से है, दिखावे और आडम्बर से नहीं।

५. **मूर्तिपूजा को ईश्वर की पूजा मानना-** मूर्तिपजा ईश्वर की पूजा नहीं है। ईश्वर की पूजा तो हो ही नहीं सकती। उसे हमारी पूजा की जरूरत भी नहीं। वह कभी प्रसन्न या अप्रसन्न नहीं होता। वह तो सदा आनन्द-स्वरूप है। मूर्ति व्यर्थ है। इसने आज तक हिन्दुओं को दिया ही क्या है। मूर्तिपूजा के कारण हिन्दू जड़बुद्धि, विवेकहीन और शुभकर्म विहीन हो गए हैं। हजारों मन्दिरों और मूर्तियों को मुसलमान हमलावरों और शासकों ने तोड़ा और लूटा है। कोई मूर्ति किसी आक्रमणकारी की एक टाँग भी न तोड़ सकी।

अनेक लड़ाईयाँ हिन्दुओं ने मूर्ति में शक्ति के झूठे विश्वास के कारण मुसलमानों से हारी हैं, जिनके परिणाम

www.thearyasamaj.org

स्वरूप हिन्दुओं को भयानक रक्तपात, लूटपाट और दासता झेलनी पड़ी है।

६. **गलत और प्रक्षिप्त साहित्य-** हिन्दुओं ने अपने असली और सही साहित्य चार वेदों- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद को तो भुला दिया है। गपौड़ों से भरे अठारह पुराणों को अपना लिया है। पुराणों के अन्दर ज्यादातर बातें झूठी, असम्भव, अनैतिक और अश्लील हैं। हिन्दू बेशक इन पुराणों को पढ़ते तो बहुत कम हैं पर पण्डित लोग इन्हीं पुराणों के आधार पर कथा-वार्ता और उपदेश करते हैं। हिन्दू ऐसे उपदेशों को ही सुनते हैं, उन पर विश्वास करते हैं, ऐसे उपदेशकों को विद्वान् मानते हैं और पुराणों को ही असली धर्मग्रन्थ मानते हैं। जैसा साहित्य वैसी बुद्धि। इसलिए हिन्दुओं की बुद्धि तार्किक नहीं है।

हिन्दू साहित्य की दूसरी बड़ी समस्या है कि रामायण, महाभारत आदि इतिहास ग्रन्थों में बड़ी भारी मिलावट है। जैसे गंगा गंगोत्री से चली तो पूरी तरह स्वच्छ और पवित्र है परन्तु आगे आकर गन्दगी मिलने से दूषित हो गई है। पर हिन्दू इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते, करते भी हैं तो नीर-क्षीर करने की जरूरत नहीं समझते। इसीलिए हिन्दू अविद्या-अन्धकार में फंसे रहते हैं।

७. **झूठी आस्था-** हिन्दुओं में तार्किक बुद्धि और वैज्ञानिक सोच का अभाव है। आस्था के नाम पर वे बुद्धि को ताक पर रखकर हर गलत बात को सही और असम्भाव को समभव मान लेते हैं। झूठ मनुष्य को उन्नति की ओर नहीं ले जा सकता, वह तो अवनति की ओर ही ले जाता है। रेत को खाण्ड मानने से वह खाण्ड नहीं बन जाता। आस्था सत्य पर ही आधारित होनी चाहिए, झूठ पर नहीं। इसीलिए हिन्दू भ्रमजाल में फंसे रहते हैं।

८. **सभी मजहब एक से हैं की झूठी धारणा-** प्रायः करके, हिन्दू माने बैठे हैं कि सभी मजहब एक ही सत्य ईश्वर की ओर ले जाते हैं। यह बात उतनी ही गलत है, जितनी कि यह कह देना कि चण्डीगढ़ से सभी रास्ते दिल्ली को जाते हैं। सभी सम्प्रदायों में ईश्वर, जीवात्मा, कर्मफल, पुनर्जन्म आदि की अवधारणाएँ अलग-अलग हैं। मुसलमान तो गैर मुसलमान को यातनाएँ देना और जान से मार देना स्वर्ग में जाने का साधन मानते हैं। हिन्दुओं को छोड़ सभी सम्प्रदाय अपने-अपने सम्प्रदाय को सबसे बढ़िया बताते हैं और उसे बढ़ाने का प्रयास करते है। वैदिक धर्म की मान्यताएँ सर्वश्रेष्ठ होते हुए भी हिन्दू उन्हें फैलाने का प्रयास नहीं करते क्योंकि हिन्दू उनसे अनभिज्ञ हैं और जानने की इच्छा भी नहीं रखते। सरकार द्वारा प्रसारित 'सर्वधर्म समभाव' की झूठी धारणा को हिन्दू गले लगाए हुए हैं। और झूम-झूम कर झूठा गीत गाया जाता है- मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना। इसलिए हिन्दू सदा घटाओ की स्थिति में रहे हैं, इन्होंने **बढ़ाओ** की ओर कभी ध्यान नहीं दिया।

९. **मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा-** वेद ने ईश्वर को शरीर रहित (अकायम्), अजर, अमर, अजन्मा, नित्य और पवित्र बताया हैं परन्तु हिन्दुओं ने अपनी कल्पना से अलग अलग तरह के भगवान बना लिए हैं। ईश्वर का विषय मन और आत्मा से सम्बन्धित है परन्तु मूर्तिपूजकों ने इसे आँख का विषय बना लिया है। पण्डितों द्वारा मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा का ढोंग भी हिन्दुओं को समझ में नहीं आता। साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति भी जानता है कि पत्थर की मूर्ति में न तो देखने-सुनने की शक्ति है, न उसमें कुछ समझने या करन की शक्ति है, न ही उसमें प्राण पड़ सकते हैं। पुजारी तो धन ऐंठने के लिए हिन्दुओं को बेवकूफ बनाते हैं। पर हिन्दू क्यों मूर्ख बनते हैं, यह बात समझ से परे है।

१०. **गरीबों के प्रति सहानुभूति की कमी-** हिन्दुओं में दान देने की प्रवृत्ति तो है, पर देते गलत जगह पर

www.thearyasamaj.org

हैं। वे निठल्ले और पेट भरे पण्डितों को दान देते हैं, जो महापाप है। दान तो जरूरतमन्द को देना चाहिए और विद्या के प्रसार के लिए देना चाहिए। गरीबों के प्रति सहानुभूति और सहायता का भाव रखना चाहिए। उनसे नफरत नहीं, उन्हें प्रेम की दृष्टि से देखना चाहिए। बेरोजगारों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने चाहिए, कल-कारखाने लगाने चाहिए। ईश्वर के नाम पर मन्दिर में दान देना अपने आपको धोखा देना है क्योंकि ईश्वर देता है, लेता नहीं।

११. **हिन्दुओं में अज्ञानता और अन्धविश्वास-** अज्ञानता और अन्धविश्वास के कारण हिन्दू झूठे कर्मकाण्डों में फंसे हुए हैं। जो मर चुके हैं, उनके लिए वे श्राद्ध करते हैं, ईश्वर-भक्ति के नाम पर जगराता करते हैं। ईश्वर को खुश करने के लिए वे पेड़-पौधों और नदी-तालाबों को पूजते हैं, ईश्वर का-मनुष्य रूप में आना-जाना मानते हैं, तथाकथित ज्योतिषियों से वे अपना भूत और भविष्य पूछते फिरते हैं, दुःख-तकलीफ को टालने के लिए तागे-तावीज, जन्त्र तन्त्र करवाते फिरते हैं।

१२. **भौंडे गीत-** हिन्दू औरतें कीर्तनों में बड़े घटिया किस्म के, बे तुके, बे सिर-पैर के गीत गाती हैं। उन्हें वीरता के, सदुपदेश देने वाले, सत्य इतिहास बताने वाले सार्थक गीत गाने चाहिए।

१३. **जगराते-पाप कर्म-** हिन्दुओं में जगरातों की कुप्रथा पिछले ४० या ५० वर्षों से आरम्भ हुई है। ईश्वर भक्ति के नाम पर लाऊडस्पीकर की ऊँची आवाज में रात भर घटिया किस्म के गीत गाते हैं, फिर घटिया, असम्भव, विनाशकारी कहानी कहते हैं। साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति भी इन जगरातों की निस्सारता को समझ सकता है, तो फिर हिन्दू क्यों नहीं समझते।

१४. **जातपात-** जन्म की जातपात ने हिन्दू समाज को बाट दिया है, बेहद खोखला और कमजोर किया है। जातपात की बात पूरी तरह समाप्त होनी चाहिए। सभी की एक जाति-मनुष्य जाति समझी जाए।

१५. **इतिहास को भुला दिया-** इतिहास से सीख लेकर किसी भी समाज को आगे की रणनीति बनानी चाहिए। अगर आप इतिहास से सबक नहीं सीखते तो आपके साथ फिर वही कुछ होगा, जो पहले हो चुका है। मुसलमानों ने हिन्दुओं पर आठवीं सदी से लेकर अठारहवीं सदी तक अथाह अत्याचार किए हैं। उन्होंने हजारों मन्दिरों और मूर्तियों को तोड़ा। वहा से सोना, चान्दी, हीरे, जवाहरात के रूप में बेहद धन लूटा। उन्होंने मन्दिरों के स्थान पर मस्जिदें बना दीं, पुजारियों को गाजर मूली की तरह काटा, करोड़ों की संख्या में हिन्दुओं का कत्लेआम किया, करोड़ों हिन्दुओं को तलवार के जोर से मुसलमान बनाया, लाखों हिन्दु-महिलाओं से बलात्कार किया। अब भी पाकिस्तान, बंगलादेश, कश्मीर आदि स्थानों पर जहा मौका लगता है, वे वही कुछ कर रहे हैं। १९४७ में जब पाकिस्तान बना था, तब पाकिस्तान में हिन्दुओं की आबादी २० प्रतिशत के लगभग थी और अब १ प्रतिशत रह गई है। बंगलादेश में तब ३० प्रतिशत हिन्दू थे अब ७ प्रतिशत रह गए हैं। कश्मीर में हिन्दुओं पर अत्याचार किए और लगभग तीन लाख हिन्दुओं को कश्मीर छोड़ने पर मजबूर कर दिया। पर हिन्दुओं ने इन सब घटनाओं से कोई सबक नहीं सीखा। हिन्दू अपने मित्र और शत्रु में अन्तर नहीं कर पाते। जो उन्हें समझाता है, उसे वे अपना शत्रु मानते हैं और जो उन्हें बहकाता है, उसे अपना मित्र मानते हैं। यह बहुत ही दुःख का विषय है।

१६. **हिन्दुओं में नेतृत्व और संगठन का अभाव-** हिन्दुओं का कोई तगड़ा नेता नहीं है, जो सारी हिन्दू जाति को संगठित और सशक्त बना सके।

www.thearyasamaj.org

१७. हिन्दू मुसलमानों की कबरों से खैर मागते फिरते हैं, ये कबरें जिनमें हिन्दुओं पर अत्याचार करने वाले मुसलमानों को कभी दबाया गया था। यह मूर्खता की पराकाष्ठा है, हिन्दू वीरों का अपमान है और अपनी जाति से गद्दारी है। यहा कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं।

अजमेर की दरगाह शरीफ में सूफी सन्त मुइनुद्दीन चिश्ती की कबर है। ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती (गरीब नवाज) का जन्म ११४१ में अफगानिस्तान में हुआ था। यह मुहम्मद गौरी के साथ भारत आया था। उसने भारत में आकर ७०० हिन्दुओं को मुसलमान बनाया था। अजमेर में जिस स्थान पर दरगाह है वहा पर पृथ्वीराज चौहान का राज्य था। महम्मद गौरी पृथ्वीराज चौहान को पकड़कर उसकी आँखें निकालकर उसे बन्दी बनाकर अपने साथ अफगानिस्तान ले गया था।

बहराईच (उत्तर प्रदेश) के पास मसूद गजनी की मजार है। मसूद गजनी, सोमनाथ मन्दिर पर हमला करने वाले महमूद गजनवी का बेटा था। उसने १०३३ में बड़ी सेना के साथ भारत पर आक्रमण किया था। जून १०३३ में बहराईच के मैदान में मसूद गजनी की और भारत के हिन्दू राजाओं की सेनाओं के बीच जबरदस्त लड़ाई हुई। लडाई में मसूद मियां की सेना की हार हुई तथा वह स्वयं भी मारा गया। मुसलमानों ने उसे वहीं दबा दिया तथा उसे गाज़ी की पदवी दे दी। मुसलमानों में गाज़ी की पदवी सबसे बड़ी पदवी मानी जाती है। यह पदवी उसे दी जाती है, जिसने गैर-मुसलमानों का कत्लेआम किया हो। वहा पर मुसलमान हर वर्ष इकट्ठे होते हैं और त्योहार मनाते हैं। दुख और आश्चर्य की बात है कि हिन्दू उन हिन्दू वीरों को तो भूल गए जिन्होंने अपनी जानें देकर मसूद मियां को मारा तथा उसकी सेना को हराया था। उलटा इस मसूद मियां की कबर पर मन्नतें मागने जाते हैं और टी.वी. चैनल इसे धार्मिक सद्भावना एवं धर्मनिरपेक्षता का जीता जागता प्रमाण बताते हैं।

महाराष्ट्र के एक गाँव में अलीशाह की मजार है। बृहस्पतिवार के दिन हिन्दू औरतें उसे पूजती हैं। अलीशाह कौन था? औरंगजेब के समय में अलीशाह नाम का एक मुसलमान था। वह बहुत अत्याचारी था। इलाके में उसका बहुत आतंक था। वह गाव-गाव में घूमता रहता था, जो सुन्दर हिन्दू लड़की देखता उसे अपनी वासना का शिकार बनाता था, जिस हिन्दू सेठ साहुकार से जितना धन माँगता, उतना उसे देना पड़ता था। जब किसी हिन्दू युवक का विवाह होता था तब नई दुलहन को पहली रात अलीशाह के साथ बितानी पड़ती थी। जो कोई इस बात को न मानता उसके परिवार को वह समाप्त कर देता था। लगभग बीस गावों के क्षेत्र में उसका प्रभाव था। हिन्दू उसके सामने मजबूर थे। कई वर्ष तक ऐसा चलता रहा। फिर एक गाव में धनी परिवार के युवक जोरावर सिंह का विवाह हुआ। अलीशाह का सन्देश आ गया कि अपनी पत्नी को उसके पास भेज दो। जोरावर सिंह ने उत्तर भेज दिया कि उसकी पत्नी अपनी एक दासी के साथ उस रात उसके पास पहुँच जाएगी। जोरावर सिंह ने अपने एक मित्र उदय सिंह को अपने साथ लिया। दोनों ने स्त्री का वेश धारण किया, हथियार साथ लिए और गाड़ी में बैठकर अलीशाह के यहा पहुँच गए। नशे में धुत अलीशाह तथा और बहुत से मुसलमान गाड़ी के पास आ गए। जोरावर सिंह और उदय सिंह ने अलीशाह तथा उसके परिवार के सभी सदस्यों को मार गिराया। मुसलमानों ने अलीशाह को शहीद की उपाधि दी और उसकी मजार बना दी। हिन्दू जोरावर सिंह और उदय सिंह को तो भूल गए, अलीशाह की कबर को पूजने लगे। (स्वामी शिवानन्द-हिन्दुओं की लूट)

□□

www.thearyasamaj.org

हमारा सर्वस्व- 'ईश्वर, वेद और सृष्टि'

(मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून)

वेदों ने मनुष्य को दो पैर वाला प्राणी कहा है। हमारा शरीर जड़ है, जिसमें एक जीवात्मा चेतन तत्व निवास करता है। हम कहते हैं कि यह मेरी आख है, यह मेरी नाक है, यह मेरा कान है और यह मेरा हाथ है आदि। इससे ज्ञात होता है कि आँख, नाक, कान व हाथ या मेरा पूरा शरीर 'मैं' नहीं हूँ बल्कि इनसे भिन्न हू। यह शरीर एवं इसमें सभी अंग मेरे अवश्य हैं परन्तु मैं इन सबसे भिन्न हूँ। मैं कैसा हू सो अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि मैं एक चेतन तत्व हूँ जो अत्यन्त, सूक्ष्म, नेत्रेन्द्रिय से अगोचर, सत्य, अविनाशी, अजन्मा, अमर, नित्य, अल्पज्ञ, अल्प परिमाण, अणुरूप, एकदेशी, ससीम, शुभ-अशुभ कर्मों का कर्ता व इनके सुख व दुःख रूप फलों का भोक्ता हूँ। इस संसार में मेरा जन्म माता व पिता से हुआ । जन्म धारण करने में मेरी व किसी की भी मर्जी नहीं चलती। यदि जन्म लेने की स्वतन्त्रता होती तो मैं कहीं और व किसी अन्य माता-पिता से जन्म लेता। मुझे जन्म देने वाला माता-पिता से भिन्न अन्य कोई अवश्य है, जिसने निर्णय किया कि वर्तमान जीवन के माता-पिता मेरे माता-पिता होंगे। फिर प्राकृतिक प्रक्रिया से मेरा जन्म हो गया। मुझे कर्म करने की स्वतन्त्रता है पर मैं फलों के बन्धन में बन्धा हुआ हू। अल्पज्ञा व अल्प शक्ति वाला होने से मैं जो कार्य करता हूँ, उसमें कमिया रह जाती हैं। विद्याध्ययन एवं पुरूषार्थ से मैं अपने कार्यो में दक्षता प्राप्त करता हू। ऐसा करके मैं एक सामान्य व्यक्ति बनता हू, जो अपना निर्वाह अन्यों की तरह सामान्य रूप से या उनसे कुछ उन्नत तरीके से व्यतीत करता हू। यह कुछ-कुछ मेरा परिचय है।

हमारी वर्तमान पीढ़ी व सृष्टि की आदि से लेकर अब तक उत्पन्न हुए सभी पूर्वजों व नाना योनियों के जीवधारियों को यह सारा संसार बना बनाया मिला है। हम सूर्य, चन्द्र, तारे, नक्षत्र, नाना ग्रह व आकाशीय छोटे-बड़े पिण्ड, आकाश, पृथिवी, अग्नि, वायु, जल, वन, पर्वत, नदिया, समुद्र, अन्न-औषधिया आदि वनस्पतिया आदि संसार में देखते हैं, जो सभी हमें बनी बनाई मिली हैं। ये सब वस्तुयें किससे प्राप्त हुई हैं? प्रायः लोग इस पर विचार नहीं करते। हमें लगता है कि सभी मनुष्य रात-दिन केवल अपने-अपने अन्य-अन्य कार्यों में लगे हैं और इस ओर ध्यान ही नहीं जाता। एक कारण यह भी है कि यदि वह इसका उत्तर भिन्न-भिन्न मतावलम्बी लोगों से पूछते हैं, तो उनके उत्तरों से समाधान नहीं होता। वे या तो परम्परागत, अविवेकपूर्ण या असत्य उत्तरों को मान लेते हैं या उसे स्वीकार ही नहीं करते। उनके पास इस बात के लिए समय नहीं है कि वे उन विद्वानों की तलाश करें, जो इनके सत्य उत्तर जानते हैं। इन सब उत्तरों में एक उत्तर है कि यह सारा संसार एवं इसकी समस्त वस्तुयें एक परम विशाल, अनन्त, सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान चेतन सत्ता ने बनाई हैं, उसे सृष्टि बनाने व चलाने का ज्ञान है और अब तक वह अनन्त बार सृष्टि को बनाकर चला चुका है और यह क्रम अनन्त बार इसी प्रकार से चलेगा। इस सृष्टि के आदि से ईश्वर इसे

www.thearyasamaj.org

बनाकर चला रहा है। ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष की सृष्टि की आयु है। जब यह पूर्ण हो जायेगी तो ईश्वर द्वारा यह सृष्टि प्रलय को प्राप्त हो जायेगी। प्रलय की अवस्था वह अवस्था है, जो इस सृष्टि की रचना से पूर्व की, इसकी कारण अवस्था, थी अर्थात् सत, रज व तम की साम्यावस्था। विवेक से यह ज्ञान होता है कि ईश्वर इस सृष्टि को धारण कर रहा है। जब तक वह इसे धारण किए हुए है, यह संसार भली-भांति चल रहा है। ईश्वर की रात्रि के आरम्भ होने पर कि जब वह सृष्टि को धारण नहीं करता, वह अवस्था प्रलय की होती है। तब सब कुछ नष्ट हो जायेगा। सूर्य, चन्द्र, तारे, सभी आकाशीय पिण्ड व पृथिबीस्थ सभी रचनाए अपने कारण-मूल प्रकृति में विलीन हो जायेंगी।

जिस प्रकार हमारा आत्मा अति-सूक्ष्म है, यह हम सब अनुभव करते हैं। यह चेतन, तत्व, ज्ञान व कर्म स्वभाव वाला है, यह भी हम अनुभव करते हैं। यह इतना सूक्ष्म है कि न तो हम स्वयं की आत्मा को देख पाते हैं और न अन्य प्राणियों की आत्माओं को जो कि दैनिक जीवन में माता-पिता, भाई, बहिन, पत्नी व बच्चों के रूप में हमारे सम्पर्क में रहती हैं। हमें उनके केवल शरीरों के दर्शन होते हैं और आखों को देखने पर उसमें आत्मा की चमक दिखाई देती है, जो मृतक शरीर की आखों में नहीं होती। जीवात्मा की अति सूक्ष्मता के कारण उसका आकार-प्रकार हमें अपने नेत्रों से दिखाई नहीं देता। चिन्तन करने पर हमें ज्ञान होता है कि ईश्वर सत्य, चित्त, सर्वव्यापी, निराकार, हमारी आत्मा से भी सूक्ष्म, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान सत्ता है। उसी ने यह संसार बनाया है और वही इसे धारण किए हुए है। अर्थात् इसका सर्वोत्कृष्ट रूप से संचालन कर रहा है। यहा कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति यह कहेगा कि यद्यपि वह ईश्वर को देख तो नहीं पा रहा है परन्तु ईश्वर के जिस स्वरूप का उल्लेख किया गया है, उसका होना तर्क की दृष्टि से सिद्ध है और उसका होना असम्भव नहीं है। अब प्रश्न यह है कि कैसे पता चले कि वह वस्तुतः है। यहा हम महर्षि दयानन्द का उल्लेख करना चाहते हैं। वे प्रातः व रात्रि समय में समाधिस्थ हुआ करते थे। समाधि क्या होती है? ईश्वर का ध्यान जब स्थिर हो जाता है, टूटता नहीं है, अखण्डित रहता हैं, उस ध्यान की निरन्तरता को समाधि कहते हैं। उन्होंने सम्यक्-ध्यान व समाधि के बारे में अपने ग्रन्थों में लिखा है। उनके अनेक अन्तेवासी बन्धुओं ने उन्हें समाधि लगाये हुए देखा भी था, जिसका वर्णन साहित्य में उपलब्ध है। उन्होंने लिखा है कि ईश्वर का ध्यान या उपासना करने से आत्मा के दुर्गुण दूर होकर ईश्वर के गुणों के सदृश हो जाते हैं और आत्मा का बल इतना बढ़ता है कि बड़े से बड़े दुःख के प्राप्त होने पर भी, यह हमारी स्वयं की मृत्यु का दुःख भी हो सकता है, मनुष्य घबराता नहीं है, क्या यह छोटी बात है? उनके जीवन की घटनाएँ उनके इस वक्तव्य की सत्यता का प्रमाण हैं। योग दर्शन के प्रणेता महर्षि पतंजलि ने अनुभव व तर्क, दोनों के आधार पर ध्यान व समाधि एवं योग के अन्य सभी अंगों पर प्रयोग व अभ्यास से सत्य सिद्ध किए जा सकने वाले निष्कर्ष दिये हैं। जब ईश्वर का ध्यान करते हुए, उसमें निरन्तरता आ जाती है और साधक घंटों उसमें स्थित व स्थिर रहता है, तो उस समाधि के सिद्ध होने पर हृदय में स्थित जीवात्मा में ईश्वर का साक्षात्कार, ईश्वर की प्रत्यक्ष अनुभूति व ईश्वर के आनन्द का अनुभव जो संसार के सभी सुखों से भी कहीं अधिक होता है, जीवात्मा को अनुभव होता है। यह साक्षात्कार ऐसा है, जैसा कि

www.thearyasamaj.org

हम साँसारिक जीवन में वस्तुओं को देखकर, सुनकर, पढ़कर निर्भ्रान्त व संशयरहित ज्ञान प्राप्त करते हैं। इसके बारे में मुण्डक-उपनिषद् के ४०वें श्लोक-

'भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयः।

क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।'

में कहा गया है कि ईश्वर का साक्षात्कार अथवा अपने आन्तरकि ज्ञान-चक्षुओं से दर्शन हो जाने पर हृदय की सभी गाँठे व ग्रन्थिया खुल जाती हैं, सभी संशय मिट जाते हैं, दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं और तब उस परमात्मा जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप्त रहा है, उसमें वह जीवात्मा निवास करता है। ईश्वर के साक्षात्कार के बाद जब मृत्यु आती है, तब जीव जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होकर मुक्ति में चला जाता है। मुक्ति का लाभ व सुख ऐसा है, जिसकी उपमा में कोई सासारिक सुख या पदार्थ नहीं है। हाँ, यह तो कह सकते हैं कि बड़े से बड़े सासारिक सुख मुक्ति के सुख की तुलना में हेय व न्यून ही हैं। यह मुक्ति विवेकशील कुछ ही लोगों को प्राप्त होती है। हम यह अनुमान करते हैं कि अतीत में यह मुक्ति योगेश्वर कृष्ण, मर्यादा पुरूषोत्तम राम, महर्षि दयानन्द सरस्वती, इनसे पूर्व हुए सन्त, ऋषि-महर्षि व योगियों को प्राप्त हुई होगी। प्रत्येक समझदार व ज्ञानी मनुष्य को वेद मार्ग पर चल कर मुक्ति की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होना चाहिये, ऐसा वैदिक साहित्य के विद्वानों का मत है।

इस विवरण से हम समझते हैं कि आधुनिक, तार्किक व विचारशील माने जाने वाले युवा-वृद्ध बन्धु भी काफी सीमा तक ईश्वर के अस्तित्व व उसके साक्षात्कार के सिद्धान्त व मान्यता से सहमत होंगे। यदि उन्हें कहीं कुछ भी शंका है, तो हमारा सुझाव है कि वह स्वयं वैदिक ग्रन्थों का स्वाध्याय एवं योग का व्यवहारिक प्रयोग करके देख सकते हैं। कुछ दिनों के स्वाध्याय व अभ्यास से उन्हें अनुमान होगा कि ईश्वर, जीवात्मा व ईश्वर के साक्षात्कार की मान्यतायें सत्य व यथार्थ हैं। इस लेख की यहा तक की यात्रा के बाद एक साधक व अध्येता की ज्ञान प्राप्ति की तीव्र अभिलाषा का उत्पन्न होना स्वाभाविक लगता है। उसे यह भी अनुमान हो गया होगा कि ईश्वर ने जब सृष्टि बनाई तो लोगों के कल्याण के लिए उसने कुछ ज्ञान तो आदि मनुष्यों को अवश्य दिया ही होगा अन्यथा वह अपने सभी साँसारिक व्यवहार कैसे करते और ईश्वर का ज्ञानवान व सर्वशक्तिमान होना व्यर्थ सिद्ध होता है। यदि वह ज्ञान नहीं देता तो अनेक पीढ़िया बिना किसी धर्म-कर्म का पालन किये ही समाप्त हो जातीं और यदि अन्य किसी हेतु से, जो सर्वथा असम्भव है, ज्ञान प्राप्त भी होता तो उसमें भी नाना मत होते और सत्य व असत्य का निर्णय करना कठिन हो जाता। अतः जिज्ञासा उठने पर हमें स्वाध्याय व विवेक से ज्ञात होता है कि संसार की सबसे प्राचीन ज्ञान की पुस्तक का नाम वेद है। वेद चार हैं, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, एवं अथर्ववेद। सौभाग्य से हमारे पूर्वजों के पुरुषार्थ से यह आज भी अपने शुद्ध रूप में उपलब्ध हैं। अब बात आती है कि वेदों के सत्य अर्थ कैसे जाने जायें तो इसके लिए भी हमारे पूर्वजों ने अथक परिश्रम किया ओर हमें संस्कृत की अष्टाध्यायी- महाभाष्य- निरूक्त- निघण्टु पद्धति दी है, जिसका अध्ययन कर कोई भी व्यक्ति स्वयं वेदों के अर्थों को जान सकता है। यदि किसी कारण से संस्कृताध्ययन में परिश्रम नहीं कर सकता है, तो महर्षि दयानन्द सरस्वती, आचार्य रामनाथ वेदालंकार, स्वामी विश्वनाथ विद्यालंकार व

www.thearyasamaj.org

अन्य विद्वानों के उपलब्ध वेद भाष्यों से लाभान्वित हो सकता है। हमारा अनुमान है कि सच्चे जिज्ञासुओं को ईश्वर व सृष्टि विषयक सभी प्रश्नों का उत्तर समाधान प्राप्त हो जायेगा। हमारा सुझाव है कि वेदों के सत्य-अर्थों को जानने के इच्छुक सभी जिज्ञासुओं को पहले सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका व आर्याभिविनय आदि पुस्तकें अवश्य पढ़नी चाहिये, जिससे उन्हें ईश्वर व सृष्टि आदि के विषय में प्रभूत ज्ञान हो जायेगा। हम अनुभव करते हैं कि वैदिक साहित्य का अध्ययन करने पर सभी अध्येता यह पायेंगे कि वेदाध्ययन से उनका जीवन सफल हुआ है। अन्य लोग जो वैदिक साहित्य के सम्पर्क में नही आ पाते हैं, उनकी ऐसी स्थिति होना सम्भव नहीं है।

अब हम सृष्टि पर विचार करते हैं। वेद एवं वैदिक साहित्य उत्तर देते हैं कि परमात्मा ने यह सृष्टि हमारे त्यागपूर्वक उपभोग के लिए बनाई है। ईश्वर को यह ज्ञान था कि जिन मनुष्यों को वह उत्पन्न कर रहा है, उनकी आवश्यकतायें क्या-क्या होंगी। उसने उदर व जिह्वा भी हमें प्रदान की है। जब व्यक्ति कार्य करता है तो थक जाता है और उसे भूख-प्यास लगती है। भूख की निवृत्ति के लिए भोजन व प्यास की निवृत्ति के लिए जल की आवश्यकता होती है। अतः ईश्वर ने जल व नाना प्रकार के भोजन के पदार्थ बनाये हैं। शरीर को ढकने के लिए वस्त्र की आवश्यकता होती है, अतः इसके लिए भी कपास आदि आवश्यक पदार्थ बना कर उसका वस्त्र बनाकर उसे उपयोग करने का ज्ञान भी वेद, हमारी आत्मा, मन व बुद्धि में दिया है। इसी प्रकार शरीर में इन्द्रिया हैं, उन सबके विषय बनाकर सृष्टि में उपलब्ध करा रखे हैं। यह सृष्टि हमारे शरीर व जीवन के निर्वाह के लिये आवश्यक है। इसका सदुपयोग करना ईश्वर को प्रसन्न करना है और इसका दुरुपयोग करना ईश्वर को नाराज करना है। हम संसार में भी देखते हैं कि हमें किसी से कोई भी वस्तु सदुपयोग के लिए ही दी जाती है। सिपाही को बन्दूक सदुपयोग के लिए दी गई है, यदि वह दुरुपयोग करता है तो अपराधी बन कर सजा पाता है। हमें सृष्टि की प्रत्येक वस्तु का अल्प मात्रा में उपयोग करना है। परिग्रह योग व ईश्वर प्राप्ति में बाधक है। अतः परिग्रह से बचना चाहिए। शरीर को स्वस्थ रखते हुए ध्यान-उपासना से ईश्वर को प्राप्त कर ब्रह्मवर्चस को प्राप्त हों और मृत्यु के पश्चात् ब्रह्मलोक अर्थात् मोक्ष के अधिकारी बनकर जन्म-मरण के दुःखों से मुक्ति प्राप्त करें।

हमने अपने ज्ञान व अनुभव से यह जाना है कि मनुष्य जीवन का उद्देश्य व लक्ष्य आत्मा, ईश्वर व सृष्टि का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर योग साधनों से ईश्वर का साक्षात्कार करना व मृत्यु के पश्चात् जन्म-मरण से छूटकर मुक्ति को प्राप्त करना है। ईश्वर के साक्षात्कार व मुक्ति प्राप्ति के यथार्थ साधन यथा ईश्वरोपासन, यज्ञ, सेवा, परोपकार, सत्संग आदि केवल वैदिक धर्म में ही उपलब्ध हैं। इनको जानना व तदनुसार आचरण करना ही हमारे व सभी मनुष्यों के जीवन का सर्वस्व या परम लक्ष्य है। हमारे ऋषि-मुनियों ने ईश्वर प्राप्ति व मुक्ति के मार्ग को ही मनुष्य का लक्ष्य निर्धारित किया है। इसके विपरीत जो मार्ग है, वह मनुष्य को इस जन्म व परजन्म में सुख, समृद्धि व मुक्ति के स्थान पर बन्धन में डालकर दुःखमय जीवन व्यतीत कराते हैं। अतः प्रत्येक समझदार व्यक्ति को गहन विचार व चिन्तन कर अपने लक्ष्य का निर्धारण कर उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नरत होना चाहिये।

❑❑

www.thearyasamaj.org

गृहस्थ आश्रम का आधार- पंच महायज्ञ

(पं० नन्दलाल निर्भय- भजनोपदेशक, पलवल, हरियाणा)

जीवन सुखी बनाना है तो मानो बात हमारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।
पंच यज्ञ करने वाले जन, जग में आदर पाते।
बड़े भाग्यशाली हैं याज्ञिक, जीवन सफल बनाते।।
वैदिक धर्मी शुभ कर्मी, जीवन भर मौज उड़ाते।
वेद विरोधी, धूर्त नास्तिक, दर-दर धक्के खाते।।
नफरत से देखे जाते हैं, जालिम अत्याचारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।
पहला यज्ञ है ब्रह्म यज्ञ, सब ईश्वर के गुण गाओ।
जगत पिता है जग का स्वामी, उसे नहीं बिसराओ।।
शाम-सवेरे बडे प्रेम से परमेश्वर को ध्याओ।
ईश्वर पर विश्वास करो तुम कभी नहीं घबराओ।।
जग का पालक है प्रभु प्यारा, दयावान-न्यायकारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।
देव यज्ञ है यज्ञ दूसरा, जग में हवन कहाता।
वातावरण सुगन्धित करता, प्रदूषण मिट जाता।।
ईश्वर भक्त याज्ञिक जग में, मोक्ष धाम को पाता।
कभी यज्ञ करने वालों के, रोग निकट ना आता।।
घर घर में सब यज्ञ रचाओ, देव यज्ञ सुखकारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।
माता-पिता की सेवा करना पितृ यज्ञ कहाता।
मात-पिता के सेवक को देता है सुफल विधाता।।
मात-पिता आचार्य जनों की, जो जन करते सेवा।
जीवन भर वे सुख पाते हैं, पाते अद्भुत मेवा।।
देव लोक जाते हैं याज्ञिक, कहते वेदाचारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।
चौथा यज्ञ बलिवैश्वदेव यज्ञ, काम जगत के आओ।
मानव हो मानवता धारो, दयावान बन जाओ।।
चींटी से हाथी तक सबको, खुश होकर दो भोजन।
बनो तपस्वी, तयागी, दानी, होंगे प्रभु के दर्शन।।
राम, कृष्ण, चाणक्य, शिवा से, बनो वीर वृतधारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।
अतिथि यह है यज्ञ पाचवां, घर आएं सज्जन।
सतजनों अरु विद्वानों का, स्वागत करो लगा मन।।
ज्ञान प्राप्त कर विद्वानों से, बन जाओ सब ज्ञानी।
पंच यज्ञ सुखकारी हैं, ऋषि दयानन्द ने मानी।
वेद, शास्त्र, मनुस्मृति पढ़ो तुम, सुख पाओगे भारी। पंच यज्ञ रोजाना करना, शुरू करो नर नारी।।

www.thearyasamaj.org

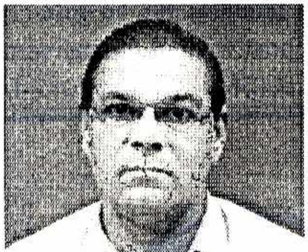

वैदिक विद्वान् एवं शिक्षाविद् डॉ० सुरेन्द्र कुमार

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के कुलपति बने

वैदिक विद्वान् और शिक्षाविद् डॉ० सुरेन्द्र कुमार (मनुस्मति भाष्यकार) को देश के प्रसिद्ध शिक्षा संस्थान गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का कुलपति नियुक्त किया गया है। डॉ० सुरेन्द्र कुमार प्रसिद्ध लेखक, शोधकर्ता और आर्यजगत के प्रसिद्ध प्रवक्ता हैं। हरियाणा सरकार के कालेज कैडर में छत्तीस वर्ष तक सेवा करके वे राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय गुड़गांव, सैक्टर-९ के प्राचार्य के पद से सेवानिवृत हुए। उनके द्वारा लिखित-सम्पादित बाईस पुस्तकें हैं, जिनमें से छः पुस्तकें महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक के पाठयक्रम में निर्धारित हैं। मनुस्मृति के प्रक्षिप्त श्लोकों की खोज पर किया गया उनका शोधकार्य और भाष्य आज देश-विदेश में सर्वाधिक पढ़ा जाता है। उनकी कई पुस्तकों के इंग्लिश, गुजराती, मराठी, उड़िया आदि भाषाओं में भी अनुवाद हो चुके हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में उनके दो सौ से अधिक शोधपत्र एवं अन्य रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। गुरुकुल झज्जर से प्रकाशित **'सुधारक'** नामक पत्रिका का सम्पादन वे गत दस वर्ष से कर रहे हैं। बारह वर्ष तक वे कालेज की पत्रिका के सम्पादक रहे।

आकाशवाणी दिल्ली और रोहतक से उनके आधा दर्जन वक्तव्य प्रसारित हुए हैं। राष्ट्रीय दूरदर्शन, आस्था, आस्था भजन, साधना, सुदर्शन आदि टी०वी० चैनलों पर एक सौ से अधिक वक्तव्य प्रसारित हुए हैं, जो अब भी जारी हैं। विश्वविद्यालयों तथा शोधसंस्थाओं द्वारा आयोजित शोध गोष्ठियों में तीस से अधिक शोधपत्रों का वाचन किया है तथा भारत में आयोजित आर्यसमाज के अनेक अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय महासम्मेलनों में संयोजन कार्य किया तथा वक्तव्य प्रस्तुत किए हैं। डॉ० सुरेन्द्र कुमार का जन्म मकड़ौली कलां, जिला रोहतक (हरियाणा) में हुआ। उन्होंने महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर से 'आचार्य' एवं 'वेदवाचस्पति' परीक्षा उत्तीर्ण की, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार से 'एम०ए० हिन्दी' उत्तीर्ण की तथा विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ से 'एम०ए० संस्कृत' स[illegible]क अंकों में उत्तीर्ण कर वहीं से पी०एच०डी० उपाधि प्राप्त की। इनको देश-विदेश की संस्थाओं से अब [illegible]क दर्जन से अधिक सम्मान/पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। डॉ० सुरेन्द्र कुमार का आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वानों में विशेष स्थान है तथा वे आर्यजगत् की एक दर्जन से अधिक संस्थाओं के दायित्वपूर्ण पदों से जुड़े हुए हैं।

परमपिता-परमात्मा उन्हें इतनी शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करें कि वे गुरुकुल को उसके प्राचीन गौरव तक पहुंचाने में सक्षम हो सकें। ''आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट'' एवं ''ट्रस्ट'' परिवार की ओर से उनको हार्दिक बधाई और बहुत-2 शुभकामनाएँ।

धर्मपाल आर्य

प्रधान

www.thearyasamaj.org

आर./आर. नं० १६३३०/६७ अगस्त २०१३
Post in Delhi R.M.S
०१-०७/८/२०१३

अगस्त 2013

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2012-14
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१२-१४
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2012-14

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण दो माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

— दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

श्री सेवा में ....
ग्राम........................
डा........................
जि........................
पी पुस्तक/पत्रिका

प्रकाशक : धर्मपाल आर्य, ४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-६
मुद्रक : वैदिकिरण आर्ट प्रिंटर्स, १५३४, गली कासिमजान, बल्लीमारान, दिल्ली-६